नैतिक शिक्षा

दसवी कक्षा के लिए

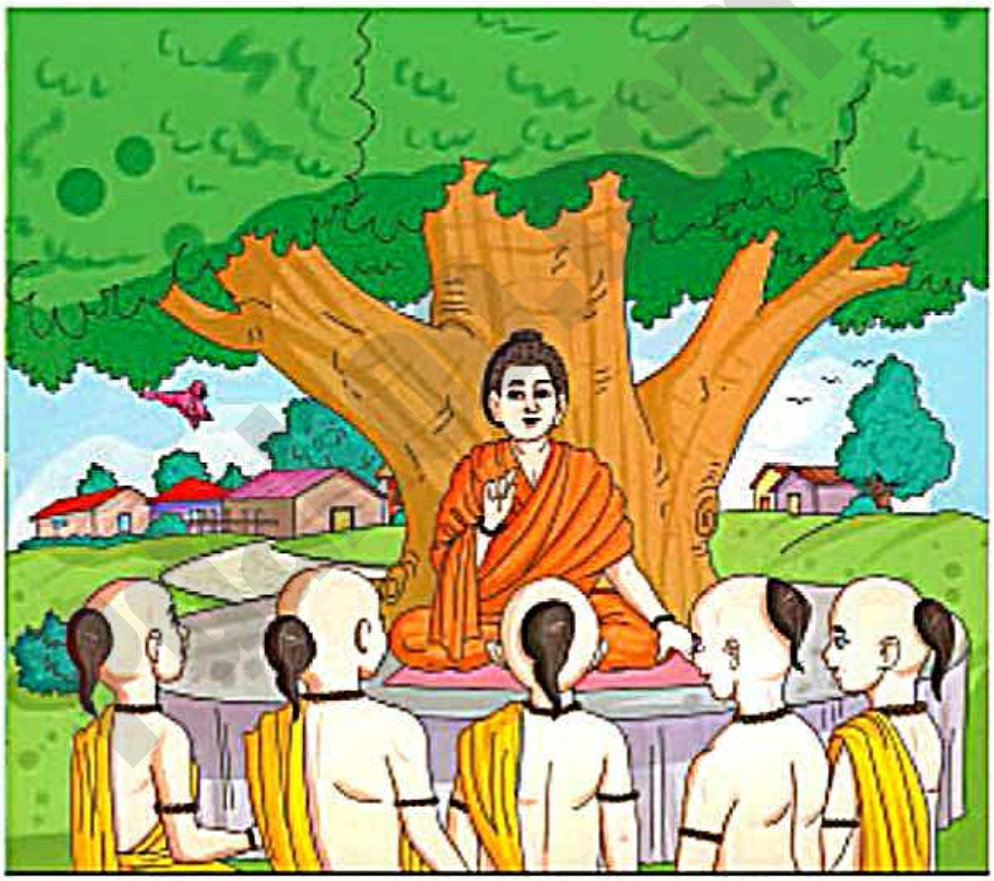

1 वर दे, वीणावादिनि वरदे!

वर दे वीणावादिनि वरदे!
प्रिय स्वतन्त्र–रव अमृत–मन्त्र नव
भारत में भर दे!
काट अन्ध–उर के बन्धन–स्तर
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर;
कलुष–भेद–तम हर प्रकाश भर
जगमग जग कर दे!
नव गति, नव लय, ताल–छन्द नव,
नवल कण्ठ, नव जलद–मन्द्ररव;
नव नभ के नव विहग–वृन्द को
नव पर, नव स्वर दे!

–सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

अभ्यास

1. 'अन्ध उर' का अर्थ स्पष्ट करो।
2. वीणावादिनि से क्या–क्या वर माँगे गए हैं?
3. वन्दना की किस पंक्ति में संसार को रोशन करने का वर माँगा गया है?
4. सरस्वती–वन्दना की कुछ पंक्तियाँ स्वयं रचो और साथियों के साथ गुनगुनाओ।
5. अपनी मनपसन्द सरस्वती–वन्दना कॉपी में लिखो।

pdf00.com

2

स्वास्थ्य और योग

आज की भाग–दौड़ भरी ज़िन्दगी में स्वयं को स्वस्थ और ऊर्जावान बनाए रखना अत्यन्त आवश्यक है। अतः योगाभ्यास हर किसी की ज़रूरत है। कामकाजी लोग तथा विद्यार्थीगण कुछ देर योग करके, काम के दबाव के बावजूद, स्वयं को तरोताजा महसूस कर सकते हैं।

योग का अर्थ है– जोड़ना। योग शरीर, मन और आत्मा को जोड़ने का काम करता है। योग हमें चिन्ता एवं तनाव से मुक्त करता है। तनाव के कारण कमजोरी, क्रोध, ईर्ष्या और अन्य नकारात्मक भावनाएँ आती हैं। ध्यान–प्रक्रिया और साधारण व्यायाम से हम तनावमुक्त होते हैं तो तन और मन स्वस्थ रहते हैं। साथ ही प्रसन्न रहने की वृत्ति का निर्माण होता है। जब कोई स्वस्थ और प्रसन्न होता है तो वह हिंसक नहीं होता। योग ज्ञान के सागर के समान विशाल है। इसका अभ्यास व्यक्ति को दुःख से बाहर निकालता है और उसकी सहनशक्ति को बढ़ाता है।

प्रायः यह समझा जाता है कि दो चार आसन और प्राणायाम करना ही योग है। लेकिन बात ऐसी नहीं है। वास्तव में यह सुपरिभाषित दर्शन तथा समग्रता पर आधारित लक्ष्य का विषय है। योग मानव को महान बनाने का कार्य करता है। अतः समस्त मानवता के लाभ के लिए है।

ईसाई मत में उपवास को महत्त्व देना, इन्द्रियों का दास न बनना, ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करना तथा सत्कर्म करते हुए ईश्वर में विलीन हो जाना योग ही है।

इस्लाम में नमाज, आसन एवं ध्यान पर आधारित प्रार्थना पद्धति है। पाँच वक्त का नमाजी प्रायः रोगमुक्त रहता है।

कबीर का पूरा साहित्य ही योग पर आधारित है। यह जन–सामान्य को योग अपनाने के लिए प्रेरित करता है। अब्दुल रहीम खानखाना के निम्नलिखित दोहे में योग और प्राकृतिक चिकित्सा के लाभों की व्याख्या ही तो निहित है।

रहिमन बहु भैषज करत, व्याधि न छाड़त साथ।

खग–मृग बसत अरोग वन, हरि अनाथ के नाथ।।

यहाँ बतलाया गया है कि वन यानी प्राकृतिक वातावरण तथा हरि अर्थात् प्राकृतिक शक्तियों के प्रभाव में जो भी रहता है, वह सदैव नीरोग रहता है। अन्यथा अनेक प्रकार की औषधियाँ लेने व विभिन्न प्रकार की चिकित्सा कराने पर भी बीमारियाँ साथ नहीं छोड़ती हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार 'योगः कर्मसु कौशलम्' अर्थात्– कर्म करने की एक प्रकार की विशेष युक्ति को योग कहते हैं।

कहा जा सकता है कि योग सम्पूर्ण मानवता की धरोहर है, जिसका सम्बन्ध किसी विशेष धर्म अथवा सम्प्रदाय से न होकर अखिल विश्व समुदाय से है। मनुष्य के कष्टों का निवारण एवं कल्याण जीवन में योग पद्धति को अपनाने से सम्भव है।

स्वास्थ्य के लिए योग की आवश्यकता :

- योग का प्रयोग शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक लाभों के लिए हमेशा से होता रहा है। आज के चिकित्सा शोधों ने यह सिद्ध कर दिया है कि योग मानव के शारीरिक और मानसिक विकास के लिए वरदान है।
- जिम आदि से शरीर के किसी खास अंग का व्यायाम होता है, जबकि योग से शरीर के समस्त अंगों–प्रत्यंगों, ग्रन्थियों का व्यायाम होता है। इससे प्रत्येक अंग–प्रत्यंग सुचारु रूप से कार्य करने लगता है।
- योगाभ्यास से रोगों से लड़ने की शक्ति बढ़ती है। बुढ़ापे में भी जवान बने रह सकते हैं। त्वचा पर चमक आती है तथा शरीर स्वस्थ, नीरोग और बलवान बनता है।
- शारीरिक व मानसिक चिकित्सा की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों में से योग एक है। दमा, मधुमेह, रक्तचाप, गठिया या जोड़ों का दर्द, पाचन तन्त्र की गड़बड़ी आदि रोगों की चिकित्सा के लिए योग एक वैकल्पिक प्रणाली के रूप में सफलता प्राप्त कर चुका है, जबकि आधुनिक चिकित्सा प्रणाली वहाँ विफल हो चुकी थी।

- तनाव और कोलाहलपूर्ण सामाजिक जीवन में अधिकतर लोगों के लिए योग, स्वास्थ्य रक्षा एवं पारिवारिक मंगल का एक साधन है। रात–दिन मोबाइल फोन की घनघनाती घण्टियों और चौबीस घण्टों की व्यावसायिक आपाधापी के बीच योग राहत पहुँचाता है और कर्म में कुशलता लाता है।

21 वीं सदी के शुरू में योग के प्रचार–प्रसार को जो आधुनिक रंग दिया गया, उसके नतीजे व्यापक स्तर पर आने लगे हैं। योग के प्रति भारत ही नहीं, विदेशों में भी रुझान बढ़ा है। आज दुनिया भर के देशों में योग का पाठ पढ़ा जा रहा है। हर ओर योगासन की चर्चा है। पश्चिमी जगत आधुनिक जीवन शैली और रिश्तों में हो रहे बिखराव के कारण तनाव और चिन्ता से ग्रस्त रहने लगा है। जीवनशैली को आलीशान बनाने के बाद भी जब वह अवसाद से घिरा रहा, तो शान्ति की तलाश के दौरान योग को वह अन्तिम विकल्प के रूप में आज़माने लगा है।

प्रसिद्ध योगगुरु बी. के. एस. आयंगर ने अपने विशेष 'आयंगर योग' से देश–विदेश में योग का प्रसार किया। उन्होंने योग दर्शन की पुस्तकें 'लाइट ऑन योग', 'लाइट ऑन प्राणायाम' और 'लाइट ऑन द योग सूत्राज़ ऑफ पतंजलि' भी लिखीं। स्वामी कुवलयानन्द; हठयोगी टी. कृष्णाचार्य, श्री अरविन्दो, चिदानन्द सरस्वती, सत्यानन्द सरस्वती, महर्षि महेश योगी और श्री कृष्ण पट्टाभि तथा बाबा रामदेव आदि की भारत को विश्व योगगुरु बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। वर्ष 2014 में भारतीय प्रयासों से संयुक्त राष्ट्र संघ ने 21 जून को अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस घोषित किया।

योगासन के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं का ध्यान रखना चाहिए :

- आसन करने का स्थान खुला हो और भूमि समतल हो।
- योगासन करते समय ढीले वस्त्र पहनने चाहिए।
- ज़मीन पर दरी आदि बिछाकर योग करें।
- आसन सम्बन्धी क्रियाएँ धीरे–धीरे की जाएँ। एक दिन में अधिक आसन नहीं करने चाहिए।
- मोबाइल की लीड लगाकर, टी.वी. देखते हुए या संगीत सुनते हुए आसन नहीं करने चाहिए क्योंकि इससे श्वासों से ध्यान हटता है।
- योग के दौरान यदि शरीर के किसी हिस्से में दर्द महसूस होता हो तो आसन रोक देना चाहिए।
- सन्तुलित, सात्त्विक व समुचित मात्रा में भोजन लेना चाहिए।
- आसन के तुरन्त बाद पानी नहीं पीना चाहिए।
- योगासन करने वालों को बीड़ी, सिगरेट, शराब, तम्बाकू आदि के सेवन से बचना चाहिए।

Pdfkoo.com

vH;kl

1. योग का अर्थ स्पष्ट करो।
2. योग का सम्बन्ध सम्पूर्ण मानवता से है– उदाहरण सहित लिखो।
3. ईसाई मत के अनुसार योग में कौन–सी क्रियाएँ शामिल हैं?
4. 'योगः कर्मसु कौशलम्' की व्याख्या करो।
5. अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस कब मनाया जाता है?
6. मानव के शारीरिक और मानसिक विकास के लिए योग वरदान है। कैसे? स्पष्ट करो।
7. जिम जाने व स्वयं योगासन करने की प्रक्रिया में से आप किसको अधिक पसन्द करते हैं और क्यों?
8. क्या आप भी योगासन करते हैं? यदि हाँ, तो इससे आपको अपने शारीरिक–मानसिक स्वास्थ्य में क्या अन्तर महसूस हुआ, लिखो।
9. योगाभ्यास सहनशक्ति के विकास में किस प्रकार सहायक है?
10. योग आधुनिक जीवन शैली की माँग है, विषय पर अपने विचार लिखो।
11. उत्तम स्वास्थ्य की बात–योग के साथ, विषय पर अध्यापक कक्षा में चर्चा कराएँ।
12. कुछ योगगुरुओं के चित्र एकत्र कर एक सचित्र परियोजना तैयार करो।

Pdfkoo.com

बना सके है योग ही, भोगी को नीरोग।
कम खाओ ज्यादा जिओ, चखो सुखद संयोग।
पूरे श्रद्धा भाव से, कर अनुलोम–विलोम।
ठुकरा दो बीमारियाँ, पिओ स्वास्थ्य का सोम।

–डॉ. सारस्वत मोहन 'मनीषी'

3 मीठी वाणी (सूक्तियाँ)

सूक्ति शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– सु+उक्ति अर्थात् अच्छे वचन। सूक्तियों के सारगर्भित शब्दों द्वारा जीवनोपयोगी बातें बताई जाती हैं। मीठी वाणी से सम्बन्धित कुछ सूक्तियाँ देखिए–

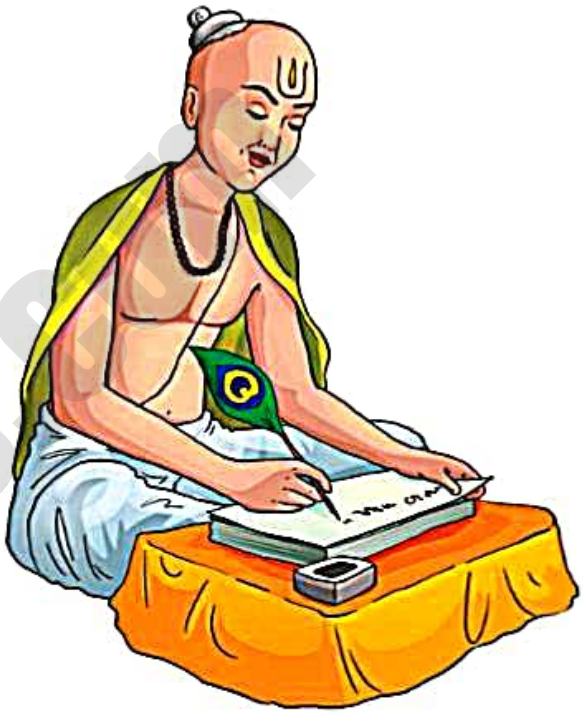

"जिह्वायाः अग्रे मधु मे जिह्वा मूले मधूलकम्"
(अथर्ववेद 1/34/2)

भाव : यहाँ वैदिक ऋषि मीठी वाणी के महत्त्व को दर्शाते हुए कहते हैं कि मेरी जिह्वा के अग्र भाग में मधुरता रहे। मेरी जीभ के मूलभाग में मधुरता रहे। मधुमतीं वाचा उदेयम् (अथर्ववेद 16/2/2) मैं जो बोलूँ, वह मधुरता से भरा हो।

प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।

तस्मात् तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता।।
(चाणक्य नीति 16/17)

अर्थात् प्रिय वचन बोलने से सभी जीव प्रसन्न होते हैं, इसलिए मीठा बोलने में हमें दरिद्रता नहीं दिखानी चाहिए।

वाण्येका समलंकरोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते,

क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्। नीतिशतक

अर्थात् केवल संस्कारयुक्त वाणी ही पुरुष को अलंकृत करती है। अन्य सारे आभूषण तो नष्ट हो जाते हैं। केवल वाणी रूपी आभूषण ही एकमात्र आभूषण है, जो शाश्वत है।

मधुर वचन है औषधि कटुवचन है तीर।

सरवन द्वार ह्वै संचर साले सगल सरीर।। –रैदास

भाव : रैदास ने मीठे वचनों को सुखद औषधि के समान बताया है और कटु–वचनों को तीर के समान तीखा बताया है। तीर लगने पर दर्द देता है परन्तु कटुवचन रूपी तीर बिना लगे ही (केवल कटाक्ष द्वारा) सालता रहता है।

ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय।। –कबीरदास

भाव : कबीर कहते हैं कि हमें ऐसी वाणी बोलनी चाहिए, जिससे हमारे मन का घमण्ड दूर हो जाए। वाणी स्वयं तथा दूसरों को भी शीतलता प्रदान करने वाली होनी चाहिए।

तुलसी मीठे वचन तें, सुख उपजत चहुँ ओर।
बसीकरण यह मन्त्र है, परिहरु बचन कठोर।। –तुलसीदास

भाव : तुलसीदास का कथन है कि मीठी वाणी से चारों ओर सुख जन्म लेता है। इसलिए कठोर वचनों को छोड़कर मीठे वचन बोलने चाहिए, यही वशीकरण का मन्त्र है।

भक्त कवि मलूकदास ने भी लिखा है–

मानुष बैठे चुप करे, कदर न जानै कोय।
जबहीं मुख खोलै कली, प्रगट बास तब होय।।

(मलूकदास बाणी पृ.36)

अर्थात् मनुष्य जब तक चुप बैठा रहता है, उसका कोई सम्मान नहीं करता। जब प्रकट रूप से मुख रूपी कली खिलती है तो उसकी सुगन्ध चारों ओर फैल जाती है।

मधुर वचन ते जात मिट, उत्तम जन अभिमान।
तनिक सीत जल सों मिटै, जैसे दूध उफान।। –वृन्द

यहाँ कवि वृन्द कहते हैं कि जिस प्रकार थोड़ा सा शीतल जल डालने से दूध का उफान मिट जाता है, उसी प्रकार मीठे वचन से व्यक्ति का अभिमान (घमण्ड) मिट जाता है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के जनक भारतेन्दु इस विषय में कहते हैं–

देखी ना कबहूँ मिसरी मैं मधुहू मैं ना
रसाल, ईख, दाख मैं न तनिक बतासा मैं।
अमृत मैं पाई ना अधर मैं सुरंगना के
जैती मधुराई भूप सज्जन की भाषा मैं। –भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

अर्थात् मिसरी में, शहद में, आम में, ईख में, दाख में, किशमिश में, अमृत में तथा रमणी के अधरों में इतना मिठास नहीं होता, जितना सज्जन की मीठी वाणी में होता है।

हिन्दी के अन्य कवियों ने भी मीठी वाणी के सन्दर्भ में इसी प्रकार कहा है।

रसविहीन जिसको कहकर रसना बने
ऐसी नीरस बातें क्यों जाएँ कहीं।

– वैदेही वनवास (14 / 100) अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध

सत्य सरल वक्ता की वाणी किसको नहीं लुभाएगी।
घातक की तलवार धार भी मोहित होकर मुड़ जाएगी।

–बालिवध (श्याम नारायण पाण्डेय)

तमिल लेखक तिरुवल्लुवर के मीठी वाणी के विषय में विचार इस प्रकार हैं – ''विचारों को सजाकर मधुर ढंग से व्यक्त करने वाला प्राप्त हो तो संसार शीघ्र उसके आदेशों को मानेगा।।'' –(तिरक्कुरल, 648)

'आनन्दयति सत्त्वानि यो हि मंगलमंजुवाक्।' –अज्ञात

भाव यह है कि मंगल और प्रिय वाणी सभी प्राणियों को आनन्द प्रदान करती है।

हिन्दी भाषा की एक लोकोक्ति भी है – गुड़ न दे तो गुड़ की–सी बात तो करे।

अभ्यास

1. मीठा बोलने का जीवन में क्या प्रभाव देखने को मिलता है? लिखो।
2. पाठ के अनुसार तिरुवल्लुवर के वाणी सम्बन्धी विचारों को स्पष्ट करो?
3. ''वचने का दरिद्रता'' सूक्ति का अर्थ लिखो।
4. मधुर वाणी की तुलना दवा से क्यों की गई है?
5. वाणी से किए घाव को हम कैसे भर सकते हैं? सिद्ध करो।
6. वाणी के महत्त्व को प्रकट करने वाली अन्य सूक्तियों का संग्रह करो।
7. बोलने से पहले तोलना क्यों ज़रूरी होता है?
8. रसविहीन बातें क्यों नहीं बोलनी चाहिए? उदाहरण सहित स्पष्ट करो।
9. ''गुड़ न दे तो गुड़ की सी बात तो करे'', इस कहावत का अर्थ लिखो।
10. मात्र वाणी के कारण मित्र–शत्रु बन जाते हैं, शत्रु–मित्र बन जाते हैं। इसके कारणों पर अध्यापक कक्षा में चर्चा कराएँ।
11. ''वाणी रूपी आभूषण ही शाश्वत है'', विषय पर अपने विचार लिखो।
12. अपने उन अनुभवों को अपने मित्रों के साथ बाँटो, जब किसी की मधुर वाणी ने आपको निराशा व उदासी से बाहर निकाला हो।

4 प्रेरक प्रसंग

1. परिस्थिति अनुसार आदर्श

यदि आपसे पूछा जाए कि क्या बनना बेहतर है– अर्जुन या एकलव्य, तो आपका उत्तर क्या होगा? हममें से अधिकतर का उत्तर होगा कि अर्जुन बनना बेहतर है क्योंकि उनको गुरु द्रोण से सीखने का प्रत्यक्ष अवसर मिला। यह सम्भवतः सही चुनाव हो सकता है। आइए, इसे जरा दूसरे दृष्टिकोण से सोचते हैं।

कल्पना कीजिए कि धनुर्विद्या की शिक्षा चल रही है और अर्जुन अभ्यास कर रहे हैं। वे एक लक्ष्य पर निशाना लगाते हैं और प्रत्यंचा खींचकर तीर छोड़ते हैं। तीर लक्ष्य से दो इंच बाईं ओर लगता है। द्रोण अर्जुन को निशाने पर तीर लगाते हुए बारीकी से देख रहे होते हैं। वे अर्जुन को उनकी गलती बताते हैं। अगले अभ्यास में अर्जुन ने उस गलती को दोहराया नहीं। इस बार तीर निशाने पर लगा।

अब कल्पना कीजिए कि एकलव्य स्वयं धनुर्विद्या सीख रहे हैं। उनके पास उनकी गलतियों को बताने वाला कोई गुरु नहीं है। न ही उनके पास कोई बना–बनाया समाधान है। कई दिनों के अभ्यास के बाद भी उनका निशाना सही नहीं लग रहा था। उनका तीर लक्ष्य से तीन इंच दूर रह जाता था। मगर एकलव्य ने उम्मीद नहीं छोड़ी। कुछ दिनों के निरन्तर अभ्यास से उनको अपनी गलती समझ में आ गई। उन्होंने वह सुधार ली और तीर निशाने पर लगने लगा।

अब प्रश्न उठता है कि कौन–सी परिस्थिति चुनने योग्य है? आप अर्जुन बनना चाहेंगे या एकलव्य? यदि आप अर्जुन बनते हैं तो आपको अपनी प्रत्येक गलती को सुधारने के लिए एक मार्गदर्शक गुरु की ज़रूरत होगी, जबकि एकलव्य अपनी गलतियाँ और उनका समाधान खुद ही ढूँढ़ता है। अर्जुन–सा सुखद संयोग सभी को नहीं मिल पाता, अतः परिस्थिति चाहे जैसी भी हो, अपना कार्य सदैव करते रहें।

हम कभी हीनता की भावना मन में न लाएँ। एकलव्य ने साहस, उत्साह और आत्मविश्वास के बल पर संघर्ष करने का दृढ़ निश्चय किया और जंगल में अकेला रहकर धनुर्विद्या का अभ्यास करता रहा। अर्जुन का गुरु के प्रति आदर भाव, अनुशासन, धैर्य, लक्ष्य निर्धारित करना आदि गुण आदर्श शिष्य का उदाहरण हैं। अतः परिस्थिति अनुसार ही उत्तम मार्ग का चयन कर हम आदर्श बनने का प्रयास करें, परिस्थिति का रोना न रोएँ।

2. परिश्रम के साथ धैर्य भी

एक बार भगवान बुद्ध अपने अनुयायियों के साथ किसी गाँव में उपदेश देने जा रहे थे। उस गाँव से पूर्व ही मार्ग में उन लोगों को जगह–जगह बहुत सारे गड्ढे खुदे हुए मिले। बुद्ध के एक शिष्य ने उन गड्ढों को देखकर जिज्ञासा प्रकट की, बहुत से गड्ढों के खुदे होने का क्या तात्पर्य है?

बुद्ध बोले, पानी की तलाश में किसी व्यक्ति ने इतने गड्ढे खोदे हैं। यदि वह धैर्यपूर्वक एक ही स्थान पर और गहरा गड्ढा खोदता तो उसे पानी अवश्य मिल जाता। पर वह थोड़ी देर गड्ढा खोदता और पानी न मिलने पर दूसरा गड्ढा खोदना शुरू कर देता।

व्यक्ति को परिश्रम करने के साथ–साथ धैर्य भी रखना चाहिए।

अभ्यास

1. अर्जुन किन गुणों के बल पर श्रेष्ठ धनुर्धारी बने?
2. एकलव्य की कौन–सी विशेषताएँ आपको अच्छी लगीं और क्यों?
3. आप अर्जुन व एकलव्य में से क्या बनना पसन्द करेंगे और क्यों?
4. सफलता प्राप्त करने के लिए किसकी आवश्यकता होती है?
5. एकलव्य ने किस प्रकार शिक्षा ग्रहण की?
6. आदर्श शिष्य में किन गुणों का समावेश अनिवार्य है और क्यों?
7. भगवान बुद्ध कहाँ जा रहे थे?
8. एक से अधिक गड्ढों की संख्या से गड्ढे खोदने वाले की किस प्रवृत्ति का संकेत मिलता है?
9. कार्य की सफलता में परिश्रम के साथ धैर्य क्यों ज़रूरी होता है?
10. अध्यापक बच्चों से उनके जीवन उद्देश्य पर सामूहिक चर्चा कराएँ।
11. अपना कोई अनुभव बताओ, जिसमें आपने अपने बड़ों से सीख ली हो। उस सीख का आप पर क्या प्रभाव पड़ा?
12. आधुनिक युग में 'गुरु द्रोण व अर्जुन' जैसे गुरु–शिष्य के उदाहरण खोजिए।

5 कर्मयोग की साधना

गीता ज्ञान का सूर्य है। भक्तिरूपी मणि का भण्डार है। निष्काम कर्म का अगाध सागर है। गीता में ज्ञान, भक्ति और निष्काम कर्म का जैसा तत्त्व रहस्य बतलाया गया है, वैसा किसी ग्रन्थ में एकत्र नहीं मिलता। आत्मा के उद्धार के लिए तो गीता सर्वोपरि ग्रन्थ है ही, इसके सिवाय यह मनुष्य को सभी प्रकार की उन्नति का मार्ग दिखाने वाला ग्रन्थ भी है। फल, आसक्ति, अहंकार, ममता से रहित होकर संसार के हित के उद्देश्य से कर्तव्य कर्म करना गीता का उपदेश है।

मनुष्य दो तरह से सोचता है – पहली बात, काम करूँगा और उसका फल भी पूरा लूँगा। दूसरी बात, फल नहीं तो काम भी नहीं। गीता का उपदेश है– कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। अर्थात् काम करो किन्तु उसका फल भगवान पर छोड़ दो। फल की चिन्ता मत करो। काम करना अपने वश की बात है। उसे करने के लिए मनुष्य स्वतन्त्र है। मनचाहा काम, मनचाहे ढंग से करने की उसे पूरी स्वतन्त्रता है। चाहे तो न भी करे। परन्तु मनुष्य होने के नाते काम करते हुए ही जीना है।

फल पर मनुष्य का अधिकार नहीं है। व्यक्ति मनचाहा फल नहीं पा सकता। यह निश्चित है कि किए जा रहे काम का फल तो मिलेगा ही। वह जब मिलना है तब मिलेगा, जितना मिलना है उतना मिलेगा और जैसे मिलना है वैसे मिलेगा। तब चिन्ता किस बात की? फल मनचाहा हो भी सकता है और नहीं भी। इसलिए फल की चिन्ता न्यायकारी ईश्वर पर छोड़ देनी चाहिए।

सारा ध्यान कर्म पर लगाना चाहिए। फल मीठा होता है यह मान लिया गया; पर कर्म की मिठास भी कम नहीं होती। हाँ, उस मिठास की खोज करनी पड़ती है। शुभ संकल्प जागे–यह सौभाग्य की बात होती है। उस संकल्प को पूरा करने में जुटें– यह गर्व की बात होती है।

कर्म का आनन्द फल प्राप्त होने के बाद आरम्भ होगा– यह मान लेना ठीक नहीं। कर्म का अपना सौन्दर्य होता है। जो लोग कर्म के सौन्दर्य और आनन्द से वंचित रह जाते हैं और फल न मिलने पर झींकने लगते हैं, उनका सारा श्रम निराशा को जन्म देने वाला बन जाता है।

जीवन परमात्मा का वरदान है और इसको सजाने–सँवारने का साधन है– कर्म अर्थात् श्रम। किसी के विचार बहुत मंगलकारी हो सकते हैं पर उनकी सराहना तभी हो सकती है, जब वे कार्य का रूप लेते हैं। ऐसा न होने पर उन विचारों की स्थिति 'जीर्णम् अंगे सुभाषितम्' वाली होगी।

कर्म की सारी प्रक्रिया में आनन्द लेने वाला व्यक्ति कर्म के पथ पर पहला कदम बढ़ाता है, तभी से प्रसन्नचित्त रहने लगता है। फल पाने की अवस्था तक पहुँचते–पहुँचते वह आनन्द के सागर में तैरने लगता है। वह कर्म को ही पूजा, आराधना और उपासना मानता है।

उसे इस बात की परवाह नहीं होती कि फल क्या मिलेगा? कब मिलेगा? कितना मिलेगा? फल प्राप्त न हो तो भी वह घाटे में नहीं रहता क्योंकि वह कर्म का पूरा आनन्द ले चुका होता है और यदि मनचाहा फल मिल जाता है तो कर्म का आनन्द दुगुना हो जाता है। कर्म का आनन्द लेना उसके व्यक्तित्व की विशेष शैली बन जाती है। सकाम कर्म करने पर कामना की पूर्ति न हो तो बड़ा कष्ट होता है। कामना पूरी हो जाए तो सुख भी मिलता है किन्तु कर्म करने में ही रुचि हो और फल की आशा छोड़ दें तो मनुष्य भवबन्धन से छूट जाता है।

जब कर्म की प्रक्रिया में ही आनन्द लेने का आभास हो जाता है तो समस्त शक्ति कर्म की कुशलता पर केन्द्रित हो जाती है। ऐसा व्यक्ति 'कर्मयोगी' के रूप में पहचाना जाता है। उसके व्यक्तित्व में नित्य निखार आने लगता है। वह हानि–लाभ, जय–पराजय, सुख–दुःख में समता कर पाता है। समता का भाव नहीं होगा तो विषमता होगी। विषमता सारे उद्वेगों की जड़ है। विषमता के रहते कर्मयोगी बनना सम्भव नहीं है। कर्मफल से मुक्ति नहीं होगी तो जन्म मरण का चक्र चलता रहेगा, मुक्ति प्राप्त नहीं होगी। कर्मयोग की साधना कठिन नहीं है पर उसमें शिथिलता का कोई स्थान नहीं है। कर्म को सुन्दर से सुन्दर ढंग से श्रेष्ठ से श्रेष्ठ बनाकर सम्पन्न करने वाला सौभाग्यशाली कर्ता होता है। ऐसे कर्मशीलों ने ही हमारे भारत को कर्मभूमि, यज्ञभूमि और योगभूमि बनाया है।

कर्म का विधान करने वाले वेद, यजुर्वेद में भी कहा गया है–

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः। – यजुर्वेद 40/2

इसका अर्थ है कि सौ वर्षों तक कर्म करते हुए ही मनुष्य जीवन जीने की अभिलाषा करे।

प्रकृति का भी प्रत्येक अवयव कर्मरत दिखाई देता है। सूर्य हो या तारे, पवन हो या पानी; सब

के सब कर्म करते हुए सृष्टि के क्रम को गतिशील रखने में सहायक हैं। ये प्राकृतिक उपादान हमें कर्म करने की प्रेरणा देते रहते हैं। कहा भी जाता है– कर्म ही पूजा है। कर्म का क्षेत्र इतना व्यापक है कि इसको एक छोटे दायरे में नहीं समेटा जा सकता। मानव सभ्यता के विकास की कहानी, कर्म की ही कहानी है। यदि मानव कर्म न करता तो उसके पास वह सब नहीं होता, जो आज वह पा चुका है। इसीलिए कर्म के प्रति रुचि जगाने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता में वासुदेव कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कर्मकुशलता को योग का पर्याय माना– 'योगः कर्मसु कौशलम्'।

अभ्यास

1. गीता किस प्रकार का ग्रन्थ है?
2. वेद कर्म को किस प्रकार करने की बात कहता है?
3. प्रकृति हमें किस प्रकार कर्म करने की प्रेरणा देती है?
4. फल पर मनुष्य का अधिकार नहीं है, तो भी मनुष्य को कर्म क्यों करना चाहिए?
5. 'कर्म की मिठास' से क्या अभिप्राय है?
6. कर्म करने वाले को फल प्राप्त न हो तो भी वह घाटे में नहीं रहता– इस कथन से तुम कहाँ तक सहमत हो? तर्क सहित स्पष्ट करो।
7. वास्तव में सच्चा कर्मयोगी कौन है?
8. कैसा मनुष्य सौभाग्यशाली कर्ता कहलाता है?
9. मनुष्य कार्य करने के सम्बन्ध में किस प्रकार सोचता है?उसकी कौन सी सोच सही है?
10. मानव सभ्यता के विकास की कहानी, कर्म की कहानी है, विषय पर अध्यापक कक्षा में चर्चा कराएँ।
11. फल की चिन्ता किए बिना, कर्म करते रहना चाहिए, विषय पर अपने विचार लिखो।
12. अपने जीवन का कोई एक प्रसंग लिखो, जब आपने कार्य को श्रेष्ठ कर्म बनाया हो।
13. अपना कोई अनुभव बताओ जब आपने बहुत मन लगाकर काम तो किया परन्तु मनचाहा फल नहीं मिला; तब आपको कैसा महसूस हुआ?
14. कर्मयोग सम्बन्धी कोई दो प्रेरक प्रसंग पढ़ो और लिखो।

Pdakoo.com

गीता पाठ

तेरहवाँ अध्याय

गीता के 13वें अध्याय का नाम 'क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ–विभाग योग' है। इस अध्याय में 34 श्लोक हैं, जिन में ज्ञानपूर्वक प्रकृति, पुरुष का निरूपण एवं क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ का विस्तारपूर्वक प्रतिपादन किया गया है। पहले श्लोक से 18वें श्लोकपर्यन्त क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के स्वरूप का निरूपण एवं 19वें श्लोक से 34वें श्लोकपर्यन्त प्रकृति, पुरुष के स्वभाव प्रभाव का निरूपण किया गया है। श्रीकृष्ण ने क्षेत्र (शरीर) व क्षेत्रज्ञ (जीवात्मा) के ज्ञान को बताया है–

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत।

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ।।13/2।।

हे अर्जुन! तू सब क्षेत्रों (शरीरों) में क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्मा मुझ को ही जान। क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का अर्थात् विकाररहित प्रकृति का और पुरुष का जो तत्त्वरूपी ज्ञान है, वही वास्तविक ज्ञान है, ऐसा मेरा मत है। शरीर को क्षेत्र कहा गया है। शरीर अनेक हैं। उनमें पृथक्–पृथक् जीवात्मा निवास करते हैं। पृथक्–पृथक् शरीरों में जीवात्मा हैं। वे वस्तुतः एक परमात्मा के ही रूप हैं। क्षेत्र की भिन्नता किन्तु क्षेत्रज्ञ की एकता– इस बात की जानकारी रखने वाले ज्ञानी हैं। क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ को समझते ही सभी प्रकार के भ्रम दूर हो जाते हैं।

चौदहवाँ अध्याय

गीता के 14वें अध्याय का नाम 'गुणत्रय–विभाग–योग' है। इस अध्याय में 27 श्लोक हैं। जिन में प्रकृति के गुणों तथा भगवत्प्राप्ति के उपायों का निरूपण किया गया है। प्रथम श्लोक से चतुर्थ श्लोकपर्यन्त ज्ञान की महिमा का वर्णन करते हुए प्रकृति–पुरुष के सम्बन्ध से जगत्–उत्पत्ति का निरूपण है। पाँचवें श्लोक से 18वें श्लोक तक प्रकृति के सत्त्व, रज, तम गुणों के स्वभाव तथा प्रभाव का विशद विवेचन है। 19वें श्लोक से 27वें श्लोक तक गुणातीत महापुरुष के स्वरूप का वर्णन करते हुए भगवत्प्राप्ति के उपायों का वर्णन किया है। भक्तियोग से भगवत्प्राप्ति के फल का निरूपण करते हुए कहा गया है–

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।

स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ।।14/26।।

जो पुरुष बिना किसी विकार के भक्तिभाव से मुझे (ईश्वर को) भजता है, वह इन तीनों गुणों सत्त्व, रज और तम को लाँघकर ब्रह्म को प्राप्त होने के योग्य हो जाता है। केवल एक परमेश्वर को ही सर्वश्रेष्ठ माने, उसी को स्वामी, परम आश्रय माने, सर्वस्व माने– यह विकार रहित भाव से

अनन्य प्रेम है। इस प्रेम में न स्वार्थ हो, न अभिमान। यह निर्दोष, पूर्ण और अटल हो। निष्काम भाव से प्रभु की आज्ञा मानकर कर्मरत रहें। सर्वान्तर्यामी ईश्वर के प्रति इस प्रकार समर्पित रहने वाला व्यक्ति प्रकृति के तीनों गुणों से प्रभावित नहीं होता। ऐसा साधक ब्रह्मज्ञान का अधिकारी हो जाता है।

पन्द्रहवाँ अध्याय

गीता के पन्द्रहवें अध्याय का नाम 'पुरुषोत्तम योग' है। इस अध्याय में 20 श्लोक हैं, जिन में संसार वृक्ष का निरूपण, जीवात्मा आदि विषयों का वर्णन, परमेश्वर के स्वभाव, प्रभाव का वर्णन करते हुए भगवत्प्राप्ति के उपायों का निरूपण किया गया है। प्रथम श्लोक से छठे श्लोकपर्यन्त संसाररूपी वृक्ष का वर्णन, स्वरूप ज्ञान के फल का निरूपण तथा भगवत्प्राप्ति के उपायों का वर्णन है। 7वें श्लोक से 11वें श्लोक तक जीवात्मा के स्वरूप एवं क्रियाओं का वर्णन है। 12वें श्लोक से 15वें श्लोक तक परमेश्वर के विभिन्न स्वरूपों का एवं उनके द्वारा प्रतिपादित कर्मों का निरूपण किया है। 16वें श्लोक से 20वें श्लोकपर्यन्त क्षर (शरीर) एवं अक्षर (जीवात्मा) और पुरुषोत्तम के स्वरूप का प्रतिपादन है। निष्काम, निर्द्वन्द्व व्यक्ति के द्वारा परमपद की प्राप्ति का वर्णन करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि–

निर्मानमोहा जितसंगदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।

द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्।।15/5।।

जिनका मान और मोह नष्ट हो गया है, जिसने आसक्तिरूपी दोष को जीत लिया है और जिनकी नित्यस्थिति परमात्मा के स्वरूप में है तथा जिनकी कामनाएँ पूरी तरह से नष्ट हो चुकी हैं, ऐसे ही सुख–दुःख नामक द्वन्द्वों से विमुक्त ज्ञानीजन उस अविनाशी परमपद को प्राप्त होते हैं। मानसिक शक्तियों के विकास से मान–सम्मान, बड़ाई और प्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है। मोह, अविवेक और भ्रम का सूचक है। साधक मान और मोह से रहित हो। उसे आसक्तिजनित दोषों पर विजय प्राप्त करनी चाहिए। वह नित्य परमात्मस्वरूप में लीन रहे, मान–अपमान, स्तुति–निन्दा, प्रिय–अप्रिय आदि द्वन्द्वों से मुक्त रहे। मोहरहित, अज्ञानरहित व मुक्त पुरुष ही परम–पद को प्राप्त होते हैं। परमेश्वर की कृपा तो प्राणीमात्र पर रहती है। भक्त, साधक, ज्ञानी–ध्यानी उसको विशेष रूप से प्रिय होते हैं।

कर्मभूमि सन्देश, कर्मयोग का नाम दे।
अर्जुन को उपदेश, बना देवकीसुत दिया।
कायर मत बन पार्थ, नहीं मार्ग आर्यत्व का।
छोड़ विचार अपार्थ, तज प्रमाद, तू युद्ध कर।
कुन्तीसुत का प्रश्न–'अपनों से कैसे लड़ूँ?'
उत्तर देते कृष्ण–'धर्मयुद्ध कर, जयी बन।'

–डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली

6

खूब लड़ी मर्दानी

भारत को स्वतन्त्रता लम्बे संघर्षों के पश्चात् मिली। भारत को स्वतन्त्रता अहिंसक युद्ध से मिली या कि सशस्त्र क्रान्ति आन्दोलन से, यह विवाद उठाना व्यर्थ है। इस तथ्य (सत्य) को स्वीकार किया जा सकता है कि अहिंसावादियों और क्रान्तिकारियों का ध्येय एक था, उद्देश्य एक ही था– स्वतन्त्रता प्राप्ति। मार्ग भले ही अलग–अलग रहे हों। भारतवासियों के जिस विद्रोह को विप्लव, गदर, राजद्रोह कहकर जुल्मी शासकों ने कुचला, जुल्म के शिकार विद्रोहियों ने उसे ही स्वाधीनता संग्राम कहा। क्रान्ति का अर्थ देकर उसके लिए अपनी जान की बाजियाँ तक लगा दीं–

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजु–ए–कातिल में है।

ये पंक्तियाँ अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' की भावना को ही व्यक्त नहीं करतीं बल्कि पूरे क्रान्तिकारी आन्दोलन का प्रतिनिधित्व करती हैं। प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के बलिदानियों में जिन स्वतन्त्रता सेनानियों के नाम गिने जाते हैं, उनमें एक थीं– झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई।

आज तक भूली न दुनिया, धार उस तलवार की।
याद है मर्दानगी उस, देश प्रेमी नार की।
थी स्वयं दुर्गा, छबीली, हाथ में खप्पर लिए।
वार जब उसने किया तो, काट सौ–सौ सिर लिए।

लक्ष्मीबाई का जन्म 19 नवम्बर, 1835 को हुआ था। उनके पिता का नाम मोरोपन्त और माता का नाम भागीरथी था। लक्ष्मीबाई के बचपन का नाम मनुबाई था। स्नेह से सभी इन्हें 'मनु' नाम से सम्बोधित करते थे। मनुबाई जब तीन–चार वर्ष की हुई, तो उनकी माँ का स्वर्गवास हो गया। मोरोपन्त का हृदय टूट गया। वह मनुबाई को लेकर बाजीराव पेशवा के दरबार में चले गए। उन दिनों पेशवा कानपुर जिले के बिठूर नामक स्थान पर रहते थे।

मनुबाई बिठूर में ही पलकर आठ–नौ वर्ष की हुई। पेशवा उन्हें प्रेम से 'छबीली' कहकर पुकारते थे। पेशवा के दत्तक पुत्र नानासाहब के साथ मनु ने बचपन में ही शस्त्र विद्या व घुड़सवारी का प्रशिक्षण ले लिया था। बाजीराव के प्रयत्न से ही केवल आठ वर्ष की उम्र में मनु का विवाह झाँसी के राजा–गंगाधर राव नेवालकर से हो गया। विवाह के बाद उनका नाम लक्ष्मीबाई रखा गया। गंगाधर राव के पूर्वजों को झाँसी का राज्य राजा छत्रसाल की ओर से उपहार के रूप में मिला था। सन 1851 में सोलह वर्ष की आयु में लक्ष्मीबाई को पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। लेकिन वह ज्यादा दिनों तक जीवित नहीं रह सका। इस आघात को गंगाधर राव सहन नहीं कर सके और वे बीमार पड़ गए। उत्तराधिकारी के रूप में उन्होंने अपने सम्बन्धी वासुदेवराव के पुत्र आनन्द को गोद ले लिया और उसका नाम दामोदर राव रखा गया। 21 नवम्बर, 1853 को गंगाधर राव का स्वर्गवास हो गया।

अंग्रेज इसी ताक में बैठे थे कि किस तरह भारतीय राज्यों पर कब्ज़ा किया जाए। इन्होंने उत्तराधिकारी के रूप में दत्तक पुत्र को अस्वीकार कर दिया और गंगाधर राव की लाखों की सम्पत्ति को अपने खज़ाने में जमा कर लिया। इस तरह 7 मार्च, 1857 को झाँसी को अंग्रेज़ी शासन में शामिल कर लिया गया। शासन व्यवस्था के लिए अंग्रेज़ प्रतिनिधि एलिस को नियुक्त किया गया।

उस समय वायसराय डलहौजी ने रानी लक्ष्मीबाई के लिए पाँच हजार रुपये मासिक पेंशन बहाल की और किला भी खाली करवा लिया। विधवा के लिए किए जाने वाले पारम्परिक 'मुण्डन' संस्कार के लिए काशी जाने की इज़ाजत नहीं दी। दामोदर राव के यज्ञोपवीत संस्कार के लिए जमा दस लाख रुपयों में से बड़ी मुश्किल से एक लाख रुपये दिए। वह भी एक व्यापारी की ज़मानत पर। इस प्रकार रानी की अवस्था अपने ही भवन के पिंजरे में बन्द पक्षी के समान हो गई।

अंग्रेजों के अन्याय व अत्याचार का बदला लेने के लिए रानी लक्ष्मीबाई युद्ध की तैयारी में जुट गई। उन्होंने स्त्री सैनिकों की संख्या में वृद्धि की। ताँत्या टोपे ने रानी को सम्पूर्ण भारत में चलाई जा रही क्रान्ति की योजनाओं से अवगत कराया। रानी इसके लिए पहले से ही तैयार थी।

pdakoo.com

31 मई, 1857 का दिन स्वतन्त्रता संग्राम के लिए तय किया गया परन्तु निर्धारित समय से पहले 6 मई को बैरकपुर छावनी में विद्रोह की आग भड़क उठी।

रानी ने भी झाँसी में विद्रोह का झण्डा खड़ा किया। उन्होंने सेना संगठित करके झाँसी के किले और खजाने पर अधिकार कर लिया। बहुत–से अंग्रेज मारे गए। जो बचे, उन्होंने झाँसी से भागकर अपनी जान बचाई। पर रानी कुछ ही दिनों तक झाँसी के किले में शान्ति से रह पाईं। अंग्रेजों की एक बहुत बड़ी सेना ने झाँसी पहुँचकर किले को चारों ओर से घेर लिया। रानी ने बड़े साहस के साथ अंग्रेजी सेना का सामना किया। पर रानी के थोड़े से सैनिक अंग्रेजों की बड़ी सेना के सामने कब तक टिके रह सकते थे। ताँत्या टोपे रानी की सहायता करने के लिए चला, पर अंग्रेजी सेना ने बीच में ही उसको रोक लिया। आखिर रानी को विवश होकर किला छोड़ना पड़ा।

रात का समय था। रानी घोड़े पर सवार हुई। उन्होंने अपनी पीठ पर अपने दत्तक पुत्र को बाँधा हुआ था। उनके मुँह में घोड़े की लगाम और दोनों हाथों में तलवार थी। उनके साथ कुछ चुने हुए सैनिक भी थे। किले के बाहर अंग्रेजी सेना खड़ी हुई थी। रानी बिजली की तरह किले से बाहर निकली और अंग्रेजी सेना को रौंदती हुई कालपी की ओर चल पड़ी। अंग्रेजी सेना ने रानी का पीछा किया पर रानी उनकी पकड़ से बाहर निकलकर कालपी के किले में जा पहुँची। किले में पहले से ही विद्रोही नेता मौजूद थे, जिनमें राव साहब मुख्य थे। उन्होंने रानी का स्वागत किया। कुछ दिनों बाद ताँत्या टोपे भी अपनी सेना लेकर कालपी जा पहुँचे।

अंग्रेजों को जब पता चला, तो उन्होंने बहुत बड़ी सेना लेकर कालपी के किले पर भी चढ़ाई कर दी। कई दिनों तक घमासान युद्ध हुआ, पर पासा उलटा पड़ा। रानी और उनके साथियों को कालपी छोड़नी पड़ी। वे ग्वालियर पहुँचे। ग्वालियर के राजा सयाजीराव शिंदे व उनके दीवान ने पहले ही अंग्रेजों के सामने घुटने टेक दिए थे परन्तु रानी ने वहाँ से अंग्रेजों को मार भगाया व ग्वालियर में राव साहब पेशवा ने अपना राजतिलक करवाया।

अंग्रेजों को जब यह पता चला तो ह्यूरोज़ विशाल सेना लेकर ग्वालियर आ पहुँचा। मुरार में उनकी मुठभेड़ ताँत्या टोपे से हुई। रानी और उनके साथियों ने बड़ी वीरता से अंग्रेजी सेना का सामना किया। रानी की तलवारबाजी व वीरता को देखकर अंग्रेज भी दंग रह गए। पर समय विपरीत था, इसलिए उनको पीछे हटना पड़ा। 18 जून को अंग्रेजों ने फिर से रानी को घेर लिया। रानी काशी और सुन्दर नाम की अपनी सहेलियों के साथ मिलकर जूझती रही। लक्ष्मीबाई की तलवार के सामने जब अंग्रेजों की एक न चली तो उन्होंने तोपों से हमला करना शुरू किया, जिससे रानी के घोड़े की एक टाँग टूट गई। एक अंग्रेज़ सैनिक की बन्दूक से चली गोली रानी के पैरों के ऊपरी भाग में घुस गई, जिससे वह घायल हो गई। तभी एक अंग्रेज सैनिक ने तलवार से लक्ष्मीबाई के सिर पर वार किया, जिससे रानी के सिर का दाहिना भाग व एक आँख शरीर से अलग हो गए। घायल अवस्था में भी रानी ने एक अंग्रेज सैनिक को मौत के घाट उतार दिया। अब रानी ने रणचण्डी का रूप धारण कर लिया था। उसने चारों ओर तलवार घुमानी शुरू कर दी। अंग्रेज सैनिक पीछे हट गए। 18 जून 1858 को रानी लक्ष्मीबाई आखिरी दम तक, अपने देश के लिए लड़ती हुई वीरगति को प्राप्त हो गई।

कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान लिखती हैं–

'खूब लड़ी मर्दानी, वह तो झाँसी वाली रानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।'

इन पंक्तियों के रूप में रानी लक्ष्मीबाई अमर हैं। एक अंग्रेज़ सज्जन मि. टेलर ने उनके विषय में लिखा – 'रानी अपने पद के योग्य धैर्य और निश्चय बुद्धि से काम करती थी'।

अभ्यास

1. भारतीय आज़ादी पाने के लिए किस–किस प्रकार संघर्ष किया गया?
2. झाँसी को अंग्रेजी राज्य में कब और क्यों शामिल किया गया?
3. रानी लक्ष्मीबाई की अवस्था अपने ही भवन के पिंजरे में बन्द पक्षी के समान थी। कैसे? स्पष्ट करो।
4. सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है जोर कितना बाजु–ए–कातिल में है– पंक्तियों का अर्थ स्पष्ट करो।
5. लक्ष्मीबाई किस प्रकार शहादत को प्राप्त हुई?
6. गंगाधर राव ने किसको अपना दत्तक पुत्र बनाया व क्यों?
7. रानी लक्ष्मीबाई युद्ध–कौशल में प्रवीण थी। आठ–दस पंक्तियों में वर्णन करो।
8. रानी लक्ष्मीबाई का मनोबल बहुत उच्च था, उदाहरण देकर स्पष्ट करो।
9. रानी की बचपन में सीखी गई शस्त्र–विद्या, उनके आगामी जीवन में बहुत काम आई– चर्चा करो।
10. 'खूब लड़ी मर्दानी' में 'मर्दानी' से आप क्या समझते हैं?
11. व्यक्ति अपने कार्यों से अमर हो जाता है, कुछ अन्य उदाहरण देकर पुष्टि करो।
12. स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने वाली किन्हीं पाँच महिलाओं पर सचित्र परियोजना तैयार करो।

pbakoo.com

7 बर्डमैन ऑफ इण्डिया : सालिम अली

आहा सालिम हमारे हीरो हैं हृदयवान
निर्मल सलिल त्रिवेणी है जिनका ज्ञान
चिकुर का है भय उनको, वह फिन बया का बान्धव
सचमुच में हैं सालिम उल्लेखनीय मानव
– डिल्लन रिप्ली (सम्पादक : ए बण्डल ऑफ फैदर्स)

दुनिया में ऐसे कम ही लोग हैं, जो दूसरों के लिए जीते हैं और मनुष्य श्रेणी से अलग जीवों के बारे में सोचने वाले तो विरले ही हैं। ऐसा ही एक विरला व्यक्तित्व था– मशहूर प्रकृतिवादी सालिम अली का, जिन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी पक्षियों के लिए लगा दी। कहते हैं कि सालिम अली परिन्दों की ज़ुबान समझते थे और इसी कारण उन्हें ''बर्डमैन ऑफ इण्डिया'' कहा गया।

उनका पूरा नाम सालिम मोइज़ुद्दीन अब्दुल अली था, जिनका जन्म 12 नवम्बर 1896 को मुम्बई में एक सुलेमानी बोहरा मुस्लिम परिवार में हुआ। ये पाँच भाइयों व चार बहनों के अनाथ परिवार के सबसे छोटे सदस्य थे। इनके जन्म के एक वर्ष बाद पिता मोइज़ुद्दीन की और तीन वर्ष बाद माता जीनत–उन–निसा की मृत्यु हो गई। इनकी परवरिश इनके मामा अमीरुद्दीन तैयब तथा निस्सन्तान मामी हामिदा बेगम की देखरेख में खेतवाड़ी, मुम्बई में एक मध्यवर्गीय परिवार में हुई। सालिम का बचपन चिड़ियों के बीच ही गुजरा।

सालिम अपनी प्राथमिक शिक्षा के लिए अपनी दो बहनों के साथ गिरिगाँव में स्थापित ज़नाना बाइबिल मेडिकल मिशन गर्ल्स हाई स्कूल में दाखिल हुए और बाद में मुम्बई के सेण्ट जेवियर स्कूल में प्रवेश लिया। इन्होंने 1913 में मुम्बई विश्वविद्यालय से दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। सालिम अली की रुचि बचपन से ही प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में घूमने की रही। इसी कारण वे अपनी पढ़ाई पूरी तरह से नहीं कर पाए। बड़ा होने पर सालिम अली को बड़े भाई के साथ उसके काम में मदद करने के लिए बर्मा (वर्तमान म्यांमार) भेज दिया गया। यह क्षेत्र चारों ओर से जंगलों से घिरा था। यहाँ सालिम को अपने प्रकृतिवादी कौशल को निखारने का अवसर मिला। कुछ साल के बाद 1917 में भारत लौटने के बाद इन्होंने औपचारिक पढ़ाई जारी रखने

का फैसला किया। सालिम अली ने पक्षी शास्त्र विषय में प्रशिक्षण लिया और मुम्बई के 'नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी' के म्यूजियम में गाइड के पद पर नियुक्त हो गए। दिसम्बर 1918 में तैहमिना अली से इनका विवाह हुआ। सालिम अली को प्रारम्भिक सर्वेक्षणों में पत्नी का साथ और समर्थन दोनों प्राप्त हुए।

अपनी आत्मकथा –'द फॉल ऑफ ए स्पैरो' में अली ने पीले गर्दन वाली गौरैया की घटना को अपने जीवन का परिवर्तन–क्षण माना है क्योंकि उन्हें पक्षी–विज्ञान की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा वहीं से मिली थी। उस समय एक भारतीय के लिए यह कैरियर सम्बन्धी असामान्य चुनाव था।

पक्षियों की अलग–अलग प्रजातियों के अध्ययन के लिए वे भारत के कई क्षेत्रों के जंगलों में घूमे। कुमाऊँ के तराई क्षेत्र में उन्होंने बया की एक ऐसी प्रजाति ढूँढ़ निकाली, जो लुप्त घोषित हो चुकी थी। सालिम अली ने पक्षियों को इतना निकट से पहचाना कि वे पक्षियों के साथ उनकी भाषा में बात भी कर लेते थे। साइबेरियाई सारसों की एक–एक आदत को सालिम अली अच्छी तरह पहचानते थे। अपने अध्ययन के आधार पर उन्होंने ही बताया था कि साइबेरियन सारस माँसाहारी नहीं होते, वे पानी के किनारे पर जमी काई खाते हैं। पक्षियों के प्रति सालिम अली का व्यवहार मित्रतापूर्ण था। उनके पास बिना कष्ट पहुँचाए चिड़ियों को पकड़ने के 100 से ज्यादा तरीके थे। बिना कष्ट पहुँचाए चिड़ियों को पकड़ने की प्रसिद्ध 'गोंग एंड फायर' व 'डेक्कन विधि' सालिम अली की ही खोज है।

सन 1980 में सालिम अली ने एक बी.एन.एच.एस परियोजना का भी निर्देशन किया, जिसका उद्देश्य भारतीय हवाई अड्डों पर पक्षियों के टकराने की घटनाओं को कम करना था। उन्होंने भारत के उन पक्षी प्रेमियों, जो ''न्यूज़लेटर फॉर बर्ड वाचर्स'' से सम्बन्धित थे, के माध्यम से भी प्रारम्भिक नागरिक विज्ञान परियोजनाओं पर काम करने का प्रयास किया। सालिम अली ने भरतपुर पक्षी अभयारण्य के नाम और निर्णय को प्रभावित किया, जिससे साइलेंट वैली नेशनल पार्क का बचाव हुआ। डॉ. अली का स्वातन्त्र्योत्तर भारत में पक्षी संरक्षण सम्बन्धी मुद्दों पर काफी प्रभाव था। सालिम अली ने कई पत्रिकाओं के लिए लेख लिखे, जिनमें मुख्य रूप से 'जर्नल ऑफ द बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी' के लिए लिखा। इन लेखों के कारण ही सालिम अली को 'पक्षी शास्त्री' के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। सालिम अली ने कुछ पुस्तकें भी लिखीं। उनकी 'द बुक ऑफ इण्डियन बड्र्स' पुस्तक की 1941 में प्रकाशित होने के बाद रिकार्ड बिक्री हुई। यह पुस्तक परिन्दों के बारे में जानकारियों का महासमुद्र थी। उन्होंने एक अन्य पुस्तक ''ए हैण्डबुक ऑफ द बड्र्स ऑफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान' लिखी, जिसमें अनेक प्रकार के पक्षियों, उनके गुणों–अवगुणों, उनकी प्रवासी आदतों सम्बन्धी जानकारियाँ दी गई हैं।

सालिम अली को देश–विदेश के प्रतिष्ठित सम्मानों से सम्मानित किया गया। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय ने उन्हें डॉक्टरेट की मानद उपाधि प्रदान की। पक्षियों पर किए गए महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए उन्हें भारत सरकार की ओर से 1958 में पद्म भूषण व 1976 में पद्म विभूषण सम्मानों से सम्मानित किया गया। वन्य जीव संरक्षण के लिए उन्हें अनेक अन्तरराष्ट्रीय सम्मान भी प्राप्त हुए।

लम्बे समय से कैंसर से जूझते हुए 91 वर्ष की अवस्था में सालिम अली का 27 जुलाई 1987 को निधन हुआ। सालिम अली भारत में एक 'पक्षी अध्ययन व शोध केन्द्र' की स्थापना करना चाहते थे। इनकी चाहत को ध्यान में रखते हुए इनके नाम पर 'बॉम्बे नैचुरल हिस्ट्री सोसायटी' और पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय द्वारा कोयम्बटूर के निकट अनाइकट्टी नामक स्थान पर 'सालिम अली पक्षी विज्ञान एवं प्राकृतिक इतिहास केन्द्र' स्थापित किया गया है।

सालिम अली के विषय में कहा जा सकता है कि वे प्रकृति की दुनिया में एक टापू बनने की बजाय अथाह सागर बनकर उभरे थे। दूर क्षितिज तक फैली ज़मीन और झुके आसमान को छूने वाली उनकी नज़रों में कुछ–कुछ वैसा ही जादू था, जो प्रकृति के प्रभाव में आने की बजाय प्रकृति को अपने प्रभाव में लाने के कायल होते हैं। उनके लिए प्रकृति में हर तरफ एक हँसती–खेलती, रहस्य भरी दुनिया पसरी थी। उन्होंने यह दुनिया बड़ी मेहनत से अपने लिए गढ़ी थी। वर्तमान समय में जब अनेकानेक पक्षी–प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर हैं, उनकी जीवनदृष्टि हमारे लिए प्रेरणा का आधार बन सकती है।

अभ्यास

1. सालिम अली को 'बर्डमैन ऑफ इण्डिया' क्यों कहा जाता है?
2. सालिम अली को अपने प्रकृतिवादी कौशल को निखारने का मौका कहाँ और कैसे मिला?
3. सालिम अली ने अपनी आत्मकथा का क्या नाम रखा व क्यों?
4. साइबेरियाई सारस की किस विशेषता की सालिम अली ने खोज की?
5. सालिम अली ने बिना कष्ट पहुँचाए चिड़ियों को पकड़ने की किन विधियों की खोज की?
6. सालिम अली को 'पक्षी शास्त्री' के रूप में मान्यता कैसे मिली?
7. भारत सरकार ने सालिम अली को किन सम्मानों से सम्मानित किया और क्यों?
8. प्रकृति की दुनिया में सालिम अली का क्या स्थान था?
9. सालिम अली पक्षियों की खोज कैसे करते थे?
10. सालिम अली के स्वभाव की क्या–क्या विशेषताएँ थीं?
11. वर्तमान में कौन सी पक्षी प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर हैं? चर्चा करो।
12. सालिम अली जैसे व्यक्ति के लिए ऐसी मृत्यु का विधान क्या न्यायसंगत जान पड़ता है? चर्चा करो।
13. विशिष्ट चोंच वाले किन्हीं पाँच पक्षियों के विषय में जानकारी एकत्र कर सचित्र परियोजना तैयार करो।
14. चिड़ियाघर का भ्रमण करो। वहाँ के किन्हीं पन्द्रह पक्षियों के नाम, रंग, आकार से सम्बन्धित एक तालिका तैयार करो।

Pdf90.com

8 भारतीय नारी

जिस देश में किसी भी मंगल कार्य की पूर्णता नारी के बिना सम्भव नहीं, जहाँ की नारियाँ विश्व सभ्यता के शैशव काल में भी सार्वजनिक रूप से गूढ़ विषयों पर शास्त्रार्थ करती हैं तथा स्वयंवर की स्वतन्त्रता जिनको मानवीय गरिमा और पूर्णता प्रदान करती हो, उस देश के नारी स्वातन्त्र्य पर सन्देह करना, गौरवमयी परम्परा को कलंकित करने के दुस्साहस के अतिरिक्त कुछ नहीं है। भारतीय समाज में नारी का स्थान बहुत गौरवमय और महत्त्वपूर्ण है। भारतीय मनीषा ने उसे वैदिक काल में ही शक्तिरूप में स्वीकार कर लिया था। वैदिक युग से आधुनिक युग तक राष्ट्रीय जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है, जिसमें भारतीय नारी ने योगदान नहीं दिया हो। राजनीति के क्षेत्र में महारानी दुर्गावती, अहिल्याबाई, लक्ष्मीबाई, सरोजिनी नायडू, डॉ. ऐनी बेसेण्ट (संस्कार से शुद्ध भारतीय) इन्दिरा गाँधी तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में गार्गी, मदालसा, मैत्रेयी, अश्वघोषा, लोपामुद्रा, विद्योत्तमा आदि के योगदान को कौन अस्वीकार कर सकता है? वर्तमान युग में भी भारत की नारी अपनी मेधा से विभिन्न क्षेत्रों को आलोकित कर रही है।

यहाँ भारत की कुछ सन्नारियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है।

मैत्रेयी :

याज्ञवल्क्य ऋषि की पत्नी मैत्रेयी महान विदुषी थी। जब ऋषि ने वानप्रस्थ होने का विचार किया तो अपनी पत्नी से मन्त्रणा की और कहा कि तुम आज्ञा दो तो मैं वानप्रस्थ होने का विचार रखता हूँ। मेरे धनादि को तुम और कात्यायनी (दूसरी पत्नी) परस्पर बाँट लो। मैत्रेयी ने कहा कि ऐसा धन मुझे नहीं चाहिए, जिससे मैं अमर न हो सकूँ। मुझे तो वह मार्ग बताओ, जिससे अमृतपद प्राप्त हो। पत्नी का वैराग्य देखकर ऋषि याज्ञवल्क्य विस्मित हो गए। उन्होंने मैत्रेयी को अपने सम्मुख बिठाकर कल्याण–मार्ग बताया।' इसके उपरान्त महर्षि याज्ञवल्क्य उपासना–भक्ति के लिए वन में चले गए। बाद में मैत्रेयी ने परम्परा से प्राप्त ज्ञान व चिन्तन के बल पर बड़े–बड़े पण्डितों से शास्त्रार्थ किया। उन्होंने कई पण्डितों को ज्ञानचर्चा में परास्त कर अज्ञान के अन्धकार से बाहर निकाला और सन्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया।

भगिनी निवेदिता :

भारत के मुक्ति आन्दोलन की महती प्रेरणा भगिनी निवेदिता का मूल नाम मारग्रेट नोबल था। वे आयरलैंड में जन्मी ज़रूर थीं लेकिन उनकी आत्मा विशुद्ध भारतीय थी। भारतीय संन्यासी स्वामी विवेकानन्द के आत्मज्ञान सम्बन्धी भाषण और दर्शन की सुन्दर व्याख्या सुनकर वे मन्त्रमुग्ध हो गईं। उनके अन्दर भारत को आत्मसात करने की प्रबल इच्छा जागृत हुई। भारत

को जानने–समझने की यही जिज्ञासा, उन्हें यहाँ खींच लाई। वे स्वामी विवेकानन्द की शिष्या बनकर भारतीयों की सेवा के लिए समर्पित हो गई। स्वामी जी ने उन्हें अपनी 'मानसकन्या निवेदिता' कहा। अरविन्द घोष ने उन्हें 'भगिनी निवेदिता' तथा रवीन्द्रनाथ ने उन्हें 'लोकमाता' कहकर पुकारा। सन 1899 में कलकत्ता में प्लेग भयंकर महामारी के रूप में फैला। तब भगिनी निवेदिता ने स्वच्छता सम्बन्धी सारा काम अपने हाथ में ले लिया। उनकी प्रेरणा से अनेक युवक–युवतियाँ प्लेग पीड़ितों की सहायता के लिए घरों से बाहर आ गए। इसका एक सुपरिणाम यह निकला कि सेवा की दिव्य अनुभूति से छुआछूत की सतही भावना भी दूर हो गई।

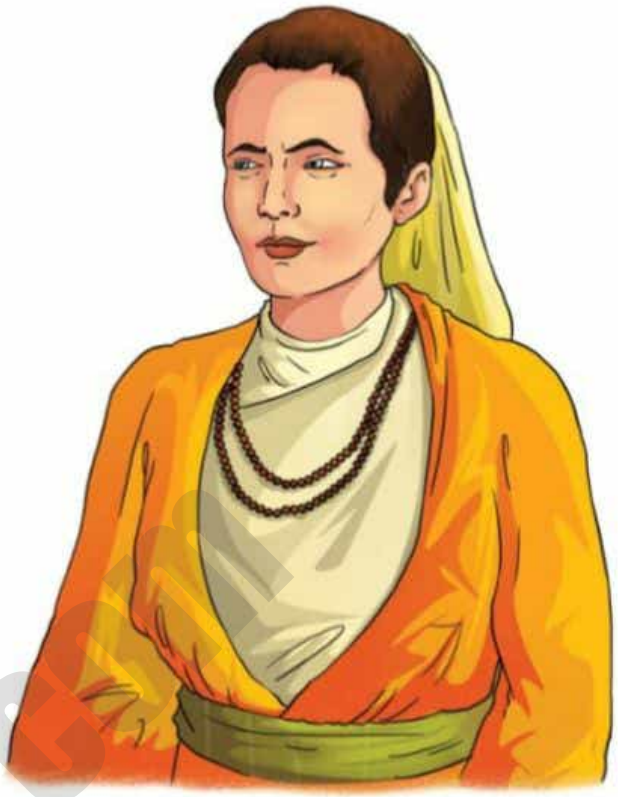

सन 1906 में पूर्व बंगाल के अकाल और बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में भगिनी निवेदिता ने पानी और कीचड़ में फँसे भूखे–प्यासे लोगों तक ज़रूरत की सामग्री पहुँचाने का कष्टसाध्य कार्य किया। उनका यह कार्य अन्य मिशनरी महिलाओं से भिन्न था। निवेदिता ने भारतीयों की सेवा का व्रत लिया था। निवेदिता के सेवा कार्यों के पीछे किसी मत के प्रचार का छद्म उद्देश्य नहीं था। वे भारतीय दर्शन से प्रभावित थीं तथा संन्यासिनियों–सा जीवन व्यतीत करती थीं।

यद्यपि भगिनी निवेदिता का मुख्य कार्य सेवा करना था तथापि वे अरविन्द घोष व उनके क्रान्तिकारी साथियों के प्रति सहानुभूति रखती थीं। उनके निजी पुस्तकालय में क्रान्ति साहित्य का बड़ा भण्डार था, जो उन्होंने बंगाल के क्रान्तिकारियों को सौंप दिया। वे महिलाओं को शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहित करती थीं। उनकी मान्यता थी, 'भारतीय स्त्रियों का शर्मीलापन, नम्रता, पवित्रता उनके लिए गर्व की वस्तु होनी चाहिए, इसे पिछड़ापन कहना भूल है। आधुनिक शिक्षा अपनी परम्पराओं पर आधारित होनी चाहिए। यह शिक्षा पूर्व–पश्चिम के सभी उज्ज्वल पक्षों को मिलाकर पूर्ण होगी। यह विश्वबन्धुत्व का प्रसार करेगी और भारत को फिर से विश्वगुरु के पद पर आसीन करने में सक्षम होगी।'

भगिनी निवेदिता ने अपने जीवन के चौदह वर्ष भारत की सेवा में अर्पित किए। 13 अक्तूबर 1911 को उन्होंने इस संसार से प्रस्थान किया। दार्जीलिंग में उनकी समाधि पर लिखा हुआ है – यहाँ चिर निद्रा में लीन है भगिनी निवेदिता, जिन्होंने अपना सर्वस्व भारतभूमि के लिए अर्पित कर दिया।

सरोजिनी नायडू –

विद्वान पिता अघोरनाथ चट्टोपाध्याय के घर 13 फरवरी 1879 को सरोजिनी नायडू का जन्म हैदराबाद में हुआ था। भाषा और साहित्य का संस्कार उन्हें बचपन से ही मिला था। पिता चाहते थे कि सरोजिनी गणितज्ञ बने किन्तु उनकी प्रकृति काव्य के अनुकूल थी। ग्यारह वर्ष की आयु में उन्होंने तेरह सौ पंक्तियों की एक लम्बी कविता 'ए लेडी ऑफ दी लेक' की रचना की। 12 वर्ष की आयु में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान लेकर पास की। उनकी प्रतिभा को देखकर पिता ने उनको उच्च शिक्षा के लिए प्रेरित किया लेकिन उन्होंने अपना सारा ध्यान चिन्तन और लेखन में लगा दिया। हैदराबाद के निज़ाम ने सरोजिनी की साहित्यिक रचनाओं से प्रभावित होकर उनके विदेश में पढ़ने के लिए छात्रवृत्ति की व्यवस्था कर दी। तब उन्होंने लन्दन के किंग्स कॉलेज में प्रवेश लिया और वे पढ़ाई के साथ–साथ साहित्य सृजन में व्यस्त हो गई। अंग्रेजी के प्रसिद्ध कला समीक्षक व साहित्यकार एडमण्ड शौए के परामर्श ने इनकी लेखनी को भारतीयता से ओत–प्रोत कर दिया। इस समय राष्ट्रीय जनमानस विदेशी दासता से मुक्ति के लिए छटपटा रहा था। सौन्दर्य की गायिका सरोजिनी, देशवासियों की पुकार की उपेक्षा नहीं कर सकी। उनकी लेखनी से नवजागरण का शंखनाद फूट पड़ा और उन्हें 'भारत कोकिला' की उपाधि से विभूषित किया गया।

18 दिसम्बर, 1917 को सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में देश की अठारह प्रमुख महिलाएँ महिला मताधिकार की माँग को लेकर तत्कालीन वायसराय लॉर्ड चेम्सफॉर्ड से मिलीं। सन 1922 में महिला मताधिकार की बात मान ली गई। यह तत्कालीन विश्व की बहुत बड़ी घटना थी।

1919 में उन्होंने बम्बई में असहयोग आन्दोलन में भाग लिया। वे कांग्रेस की पहली महिला अध्यक्ष बनी थीं तथा स्वतन्त्रता के बाद देश की पहली राज्यपाल बनने का गौरव भी उन्हीं को प्राप्त हुआ। उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन के लगभग सभी नेताओं के साथ काम किया। 1917 से 1947 के बीच भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के माध्यम से स्वतन्त्रता की लगभग सभी महत्त्वपूर्ण घटनाओं में उनकी सक्रिय भागीदारी रही। 15 अगस्त 1947 भारत के इतिहास का एक स्वर्णिम दिन था। इस दिन भारत कोकिला सरोजिनी नायडू ने रेड़ियो पर देशवासियों को भावपूर्ण बधाई दी तथा अन्य पराधीन देशों के लिए मुक्ति की कामना की।

2 मार्च, 1949 को उनका निधन हो गया।

ऐसे विलक्षण व्यक्तित्वों से युक्त, कर्तव्य के प्रति समर्पित नारियों पर सम्पूर्ण नारी जाति को गर्व है। आने वाली पीढ़ियाँ उनके त्यागमय जीवन से सदैव प्रेरित होंगी, ऐसा विश्वास है।

अभ्यास

1. वर्तमान भारतीय समाज में नारी का क्या स्थान है?
2. वानप्रस्थ होने से पूर्व ऋषि याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी से क्या कहा? इससे उनका क्या भाव प्रकट होता है?
3. मैत्रेयी ने किस मार्ग को अपनाया?
4. भगिनी निवेदिता का मूल नाम क्या था? वे किसकी शिष्या थीं?
5. कलकत्ता में प्लेग की महामारी फैलने पर निवेदिता ने सेवा कार्यों में क्या योगदान दिया?
6. निवेदिता ने भारतीयों की सेवा का अपना व्रत पूरा किया, उदाहरण सहित स्पष्ट करो।
7. सरोजिनी नायडू की शिक्षा दीक्षा किस प्रकार सम्पन्न हुई?
8. सरोजिनी नायडू ने राजनीतिक क्षेत्र में क्या भूमिका निभाई?
9. अपना कोई अनुभव बताओ, जब आपने किसी भी कारण से पीड़ित लोगों की सहायता की हो।
10. वैदिककालीन पाँच विदुषियों की जानकारी एकत्रित करो।
11. भगिनी निवेदिता भले ही विदेश में जन्मी थीं परन्तु वे पूरी तरह भारतीय रंग में रंगी थीं, अध्यापक कक्षा में चर्चा कराएँ।
12. राजनीतिक क्षेत्र में प्रसिद्ध कुछ भारतीय महिलाओं के चित्र एकत्र कर एक परियोजना तैयार करो।

Pdfkoo.com

9

ईसा मसीह की शिक्षाएँ

विश्व में अनेक ऋषि–मुनियों, पीर–पैगम्बरों, चिन्तकों व दार्शनिकों ने अपनी सोच व चिन्तन से न केवल विश्वबन्धुत्व की भावना को विकसित किया है अपितु सभ्य समाज के निर्माण में अपना योगदान भी दिया है। जिस प्रकार योगेश्वर कृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता में कर्म का उपदेश देकर हमें कृतार्थ किया है, उसी प्रकार संसार में एक अन्य ऐसी विभूति हुई हैं, जिन्होंने पूरे विश्व को चमत्कृत कर दिया। इस विभूति का नाम है– यीशु मसीह।

ईसा ने अपना सारा जीवन गरीबों, वंचितों, निःशक्तों और अनाथों के लिए समर्पित कर दिया। उन्होंने अछूतोद्धार के लिए भी कार्य किए। एक बार किसी युवक ने ईसा से पूछा कि अच्छा जीवन प्राप्त करने के लिए मुझे क्या करना चाहिए? ईसा ने कहा– अहिंसा धर्म का पालन करो अर्थात् किसी प्राणी की हत्या न करो। सदाचारी बनो, चोरी न करो, झूठी गवाही न दो, अपने माता–पिता का आदर करो, औरों को अपने समान प्यार करो तथा दूसरों के जीवन को सँवारने के लिए अपना जीवन होम कर दो।

ईसा ने विवाह को एक पवित्र बन्धन माना है। उन्होंने कहा कि जो अपनी पत्नी का परित्याग करता है, वह गलत है। यदि मनुष्य का मन शुद्ध होगा तो किसी प्रकार के नकारात्मक भाव नहीं आएँगे। मन की शुद्धता के बारे में ईसा ने लोगों से कहा, 'तुम मेरी बातें सुनो और समझो। ऐसा कुछ नहीं है, जो बाहर से मनुष्य में प्रवेश करके उसे अशुद्ध करता है। व्यभिचार, चोरी, हत्या, परस्त्रीगमन, लोभ, विद्वेष, छल–कपट, लम्पटता, ईर्ष्या, झूठी निन्दा, अहंकार और धर्महीनता–ये सब बुराइयाँ मनुष्य के भीतर से निकलती हैं और उसको अशुद्ध कर देती हैं।' अतः मन को शुद्ध रखना चाहिए ताकि बुरे विचार मन में प्रवेश ही न कर सकें।

अपने शिष्यों को प्रेम का सन्देश देते हुए वे कहते हैं – 'अपने शत्रुओं से भी प्रेम करो। जो लोग तुम पर अत्याचार करते हैं, उनके लिए प्रार्थना करो। इससे तुम परमपिता की सन्तान बन

जाओगे।' भाव यह है कि अपनी दृष्टि सकारात्मक रखो। सकारात्मक सोच, प्रेम और विश्वास के बल पर तुम अपने शत्रु को भी मित्र बना सकते हो। ईसा का कथन है कि सूर्य भले और बुरे दोनों प्रकार के व्यक्तियों पर समान रूप से प्रकाश फैलाता है, वह किसी से द्वेष नहीं रखता तो फिर तुम क्यों मन में मैल रखते हो? जब तुम शत्रुओं से प्रेमपूर्वक व्यवहार करोगे तो बड़े बनोगे। अतः शत्रुओं से भी प्रेम करो और पूर्ण बनो।

यदि कोई अपराध करता है तो उसको डाँटो और यदि वह पश्चात्ताप करता है तो उसे क्षमा करो। यदि वह दिन में सात बार अपराध करता है और सातों बार पश्चात्तापपूर्वक क्षमा याचना करता है तो उसको क्षमा कर दो। यदि वह फिर भी पाप करता है तो उसे दण्डाधिकारियों को सौंप दो।

परोपकार हमारे जीवन का उद्देश्य होना चाहिए। यदि तुम परोपकार हेतु भोज देते हो तो अपने चिर–परिचितों, मित्रों, सगे–सम्बन्धियों और धनी व्यक्तियों को निमन्त्रण मत दो बल्कि निर्धनों, वंचितों और निःशक्तों आदि को खाना परोसो ताकि वे अपनी भूख शान्त कर सकें। होता यह है कि धनी और परिचित व्यक्ति तो आपको खाना खिलाकर अपना उपकार उतार देते हैं परन्तु गरीब व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकते। गरीबों पर किए गए उपकार को परमपिता अपने आप उतारेगा। अतः कुछ भी न माँगो, बदले में कोई चाह न रखो। तुम्हें जो कुछ देना हो, दे दो। वह तुम्हारे पास वापस आ जाएगा, लेकिन आज ही उसका विचार मत करो। देने की ताकत पैदा करो। दे दो और बस काम खत्म हो गया। यह बात जान लो कि सम्पूर्ण जीवन दानस्वरूप है। यदि नहीं दोगे तो प्रकृति तुम्हें देने के लिए बाध्य करेगी। इसलिए स्वेच्छापूर्वक दो।

शिष्य बनने की योग्यता बताते हुए ईसा का कथन है कि जो व्यक्ति मेरे पास शिष्य बनने के लिए आता है और यदि वह अपने माता–पिता, सन्तान, भाई–बहन और अपने जीवन के मोहबन्धन में बँधता है, तो वह मेरा शिष्य नहीं हो सकता। यदि कोई अपने माता–पिता, भाई–बन्धु, पुत्र या स्वयं के प्रति लगाव रखेगा तो वह सन्त बनने के लिए शिष्य होने की पात्रता पूरी नहीं कर सकेगा। शिष्य बनने की योग्यता को उन्होंने एक दृष्टान्त द्वारा बताया है– तुम में से ऐसा कौन होगा, जो मीनार बनवाना चाहे परन्तु पहले पैसे का हिसाब न लगाए और यह नहीं देखे कि उस मीनार को पूरा करने की पूँजी उसके पास है या नहीं? ऐसा न हो कि नींव डालने के बाद वह निर्माण कार्य को पूरा न कर सके और देखने वाले उसकी हँसी उड़ाएँ– ''इस मनुष्य ने निर्माण कार्य प्रारम्भ तो किया किन्तु उसे पूरा नहीं कर सका।'' यही बात शिष्य बनने की योग्यता पर लागू होती है। शिष्य बनने के लिए माता–पिता और परिवार को छोड़ना पड़ेगा।

ईसा ने मानव को जगत की ज्योति बताया है। उसका दृष्टिकोण व्यापक होना चाहिए। जिस प्रकार दीपक को जलाकर उसको दीवार पर रखा जाता है ताकि वह सबको प्रकाशित कर सके। यदि उसको पलंग के नीचे रखा जाए तो उसका प्रकाश सीमित हो जाएगा और वह अधिक कुछ प्रकट करवाने में सहायक नहीं होगा। अतः दीपक को दीवार पर रखो ताकि वह सभी को प्रकाशित कर सके। हम अपने आस–पास के परिवेश को प्रकाशित कर सकें। यदि किसी के घर में अँधेरा है (समस्याएँ हैं) तो हमारा कर्तव्य है, वहाँ तक उजाला (समाधान) ले जाएँ।

जो लोग भविष्य की चिन्ता करते हुए तनाव में तो रहते हैं परन्तु कोई काम–धन्धा नहीं करते, उनके लिए यीशु का यही सन्देश है –'कल की चिन्ता मत करो क्योंकि कल अपनी चिन्ता भी साथ लेकर आएगा। आज की ही चिन्ता करो।'

ईसा मसीह ने शान्ति, प्रेम और पवित्रता से रहने का सन्देश दिया है–

- वह धन्य है, जिसका हृदय पवित्र है और उन्हीं का प्रभु से साक्षात्कार होगा।
- शान्ति चाहने वाले बनो क्योंकि वे परमात्मा के बालक हैं।

इस प्रकार ईसा ने पवित्रता, धन की निःसारता, विनम्रता, दायित्व, शिष्य की योग्यता, शिष्टाचार आदि अनेकानेक विषयों पर उपदेश दिया है, जिन्हें कोई भी मतावलम्बी अपनाकर अपने आचरण को श्रेष्ठ बना सकता है।

अभ्यास

1. ऋषि–मुनियों, पीर–पैगम्बरों आदि ने विश्व बन्धुत्व की भावना को किस प्रकार विकसित किया?
2. ईसा मसीह की शिक्षाओं की सूची बनाओ।
3. ईसा मसीह ने अच्छा जीवन जीने के लिए क्या सन्देश दिया?
4. विवाह के विषय में ईसा के क्या विचार थे?
5. ईसा के अनुसार अपने शत्रु के प्रति हमारी भावनाएँ कैसी होनी चाहिए?
6. ईसा ने मानव को जगत की ज्योति क्यों बताया है?
7. यदि तुम्हें भोज का आयोजन करना हो तो तुम किन–किन को निमन्त्रित करना चाहोगे? और क्यों?
8. शिष्य बनने के लिए किनका त्याग करना आवश्यक है? लिखो।
9. आज की चिन्ता आज ही करें, इस विषय पर आठ–दस पंक्तियों में अपने विचार लिखो।
10. चार्ट पेपर पर क्रिसमस ट्री बनाओ और उसको सजाओ।
11. प्रेम सबसे करो– मत सोचो कि वह मित्र है या शत्रु, विषय पर कक्षा में चर्चा करो।
12. अपने जीवन का कोई अनुभव बताओ, जब आपको किसी महापुरुष ने कोई शिक्षा दी हो और आपने उसे अपने जीवन में अपनाया हो।

Pdfakoo.com

10 भारतरत्न मदनमोहन मालवीय

मरि जाऊँ माँगूँ नहीं अपने हित के काज।

पर कारज हित माँगिबे, मोहि न आवत लाज।।

उपर्युक्त पंक्तियाँ महामना मदनमोहन मालवीय पर खरी उतरती हैं। वे लोगों के सामने झोली फैलाते थे और उनकी झोली कभी खाली नहीं रहती थी। इसलिए उन्हें 'भिक्षुक–सम्राट' कहा जाता था। यह निर्विवाद सत्य है कि दान में मिली राशि की एक पाई भी उन्होंने अपने ऊपर खर्च नहीं की और एक अद्‌भुत संस्था खड़ी कर दी– बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय। भारतीय संस्कृति की रक्षा व शिक्षा के प्रसार के क्षेत्र में यह उनका महानतम कार्य था।

सन 1885 में मदनमोहन कांग्रेस पार्टी में शामिल हुए। अगले वर्ष कांग्रेस अधिवेशन में उन्होंने जोरदार भाषण दिया। पत्रकारिता से जुड़कर वे 'हिन्दुस्तान' 'अभ्युदय' व 'लीडर' पत्रों का सम्पादन करने लगे। कालाकांकर नरेश रामपालसिंह के विनम्र आग्रह पर, न चाहते हुए भी, मदनमोहन मालवीय ने एल.एल.बी. की और उच्च न्यायालय में वकालत करने लगे। इस क्षेत्र में उनकी सबसे बड़ी सफलता चौरा–चौरी काण्ड के अभियुक्तों को फाँसी की सजा से बचा लेने की थी। ये अपने मुकदमे दूसरे वकीलों को दे दिया करते ताकि उनको आगे बढ़ने के मौके मिलें।

मदनमोहन मालवीय आधुनिक समय के भीष्म पितामह थे। आज का भारत उनसे प्रेरणा पा रहा है। मालवीय का मन बहुत बड़ा था, इसलिए उनको 'महामना' कहा जाता है। उनकी सेवाओं से तृप्त है माँ भारती व साधना से उर्वर है– भारतीय वातावरण। सच कहा जाए तो मालवीय में न मद था, न मोह। थी तो बस एक धुन, एक लगन हिन्दी–हिन्दू–हिन्दुस्तान की। उनकी यह धुन और लगन महाशक्ति बन गई। उनका ध्येय केवल और केवल जनहित था। आडम्बर से उन्हें चिढ़ थी।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना से पूर्व कुछ लोग व्यंग्य शैली में पूछते, 'मालवीय जी, आपका खिलौना विश्वविद्यालय कब तक बन जाएगा?' उनकी बातों पर क्रोधित हुए बिना मालवीय सन्तोषजनक उत्तर देते। एक दिन उनकी मेहनत रंग लाई। 14 फरवरी 1916 को बनारस हिन्दू

विश्वविद्यालय की नींव रखी गई तो उन्हें चिढ़ाने वाले लोग ठगे–से रह गए। शीघ्र ही इसकी गिनती देश के प्रमुख विश्वविद्यालयों में होने लगी। एक दीक्षान्त समारोह में विश्वविद्यालय के उद्देश्य बताते हुए उन्होंने कहा था– इस विश्वविद्यालय की स्थापना इसलिए की गई है कि यहाँ का प्रत्येक छात्र वीर पुरुष और प्रत्येक छात्रा वीर माता बने। सच्चरित्रता इसका मूल मन्त्र है और इसी से हमारी शोभा है। इस विद्यालय के द्वार सबके लिए खुले हैं।

बस फिर क्या था–हर वर्ष हजारों छात्र इस संस्था से शिक्षित होकर निकलने लगे। सन 1919 से 1939 तक मालवीयजी स्वयं विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। विद्यार्थियों के प्रति उनका व्यवहार पिता के समान था। आर्थिक रूप से कमजोर छात्रों की उन्होंने सदा मदद की। वे प्रायः कहा करते– आर्थिक तंगी के कारण कोई छात्र शिक्षा से वंचित न रहने पाए। न जाने इन छात्रों में कितने शिवाजी, महाराणा व अर्जुन छुपे हैं। वे यह भी कहते थे–यदि हम संस्कृति को भूल जाएँगे तो जड़ से कट जाएँगे और यदि विज्ञान को नहीं समझेंगे तो पिछड़ जाएँगे। उन्होंने विज्ञान व संस्कृति को समान महत्त्व दिया।

स्त्री शिक्षा के विषय में मदनमोहन मालवीय के विचार स्पष्ट थे। उनके अनुसार, 'स्त्री शिक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि स्त्रियाँ भावी सन्तान की माताएँ हैं। उनकी शिक्षा ऐसी हो, जो उनके व्यक्तित्व में प्राचीन तथा नवीन सभ्यता के गुणों का समन्वय कर सके।'

धार्मिक सहिष्णुता के विषय में पण्डित मदनमोहन ने 'अभ्युदय' पत्र में लिखा था, 'भारत केवल हिन्दुओं का देश नहीं है। यह हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों का प्यारा जन्मस्थान है। हमें हिन्दू–मुसलमान होने की बजाय सच्चा भारतीय होना अनिवार्य है।'

राजनीतिक क्षेत्र में मदनमोहन मालवीय को काफी यश मिला। असहयोग आन्दोलन में वे जेल भी गए। दूसरी गोलमेज सभा में वे भारत के प्रतिनिधि के रूप में इंग्लैंड गए। दो बार हिन्दू महासभा के प्रधान चुने गए। उन्होंने हिन्दी की प्रमुख संस्था 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की स्थापना की और कई बार इसके अध्यक्ष भी रहे।

पण्डित मदनमोहन अपनी संस्कृति को भूलकर अलग राह पर चलने की बात सोचते भी नहीं थे। वे अंग्रेजियत की बाढ़ को रोकते थे परन्तु विरोध करके नहीं बल्कि अपनी कार्यशैली व सोच से। उनकी सोच हिमालय से भी ऊँची और समुद्र से भी गहरी थी। उनकी वाणी में अद्भुत मिठास था। उनके भाषण सुनकर श्रोता मन्त्रमुग्ध रह जाते थे। काम के समय वे स्वयं आगे आ जाते थे और कीर्ति के समय दूसरों को आगे कर देते थे। उनका मन्त्र था–काम करो, गाथा मत गाओ।

मदनमोहन मालवीय निःसन्देह क्रान्तिकारी थे। आजादी के आन्दोलन के दौरान वे कांग्रेस के नरम व गरम दल के मध्य पुल का काम करते थे। उन्होंने केवल संस्थाएँ ही नहीं बनाई, लोगों को भी बनाया। पण्डित मदनमोहन जिस बात को ठीक समझते थे, उस पर टिके रहते थे। दूसरों की देखादेखी वे अपना मत स्थिर नहीं करते थे। वे अछूतों को दीक्षा देने, मन्दिरों में उनका प्रवेश कराने, कुओं तथा स्कूलों को उनके लिए खोल देने के पक्षपाती थे। वे जनता जर्नादन को देवतातुल्य मानते थे।

महाभारत, वेद व गीता उनके प्रिय ग्रन्थ थे, जो यात्राओं के समय भी साथ रखे जाते थे। सुबह–सायं दर्शन करने हेतु वे अपने माता–पिता के चित्र भी अपने साथ रखा करते। स्पष्ट है कि वे मातृ–पितृ भक्त थे। मालवीय के असाधारण व्यक्तित्व को ध्यान में रखकर पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था– दुनिया के किसी भी गज से नापें, मालवीय जी को बहुत बड़ा पाएँगे।

इतना ही नहीं, मालवीय शुचिता की मूर्ति थे। वे सुबह–शाम सन्ध्या करते। नशीले पदार्थों से दूर रहते। पोशाक की दृष्टि से भी वे पूर्ण भारतीय थे। ये बातें सिद्ध करती हैं कि वे भारतीय संस्कृति से गहराई से जुड़े थे। उनकी सोच व कार्यशैली सबके लिए अनुकरणीय थी, है और रहेगी। 12 नवम्बर 1946 को यह महामानव सदा–सदा के लिए हमसे विदा हो गया।

यह ठीक है कि हम महापुरुषों की मूर्तियाँ खड़ी करें, स्मारक बनाएँ परन्तु सबसे ज़रूरी है उनकी ज़िन्दगी से प्रेरणा लेकर देशहित के कार्य करें। भारतीयता के पोषक व शिक्षा प्रसारक देश रत्न मदनमोहन मालवीय के प्रति सिर बार–बार श्रद्धानत हो जाता है, जिसके फलस्वरूप भारत सरकार ने 2015 में उन्हें भारत रत्न से अलंकृत किया।

अभ्यास

1. भारतीय संस्कृति व शिक्षा के प्रचार–प्रसार में मदनमोहन मालवीय के योगदान पर अपने विचार प्रकट करो।
2. स्त्री शिक्षा के विषय में मदनमोहन मालवीय के क्या विचार थे?
3. राजनीतिक क्षेत्र में मालवीयजी द्वारा दिए गए योगदान का वर्णन करो।
4. किसी कार्य को करने के लिए सर्वोच्च शक्ति संकल्प है और अन्य शक्तियाँ गौण हैं–पण्डित मदनमोहन के सन्दर्भ में यह बात आपको कहाँ तक ठीक लगती है? लिखो।
5. मदन मोहन मालवीय त्याग व सादगी की मूर्ति थे। पाठ के आधार पर अपने विचार लिखो।
6. कुछ लोग मर कर भी अमर हो जाते हैं–क्या आप इस कथन से सहमत हैं? यदि हाँ तो उदाहरण सहित पुष्टि करो।
7. इस पाठ को आधार मानकर लिखो– चरित्रवान लोग देश की शोभा होते हैं।
8. मदनमोहन मालवीय की जीवनी पढ़ो और उनके जीवन से सम्बन्धित दो या तीन प्रेरक प्रसंग अपनी कॉपी में लिखो।
9. मदनमोहन मालवीय के जीवन से आपको क्या प्रेरणा मिलती है, अपने सहपाठियों से चर्चा करो।
10. मदनमोहन मालवीय एक : भूमिकाएँ अनेक विषय पर एक सचित्र परियोजना तैयार करो।

PUKOO.COM

11

नीतिपद

जो जग में साहित्य और संगीत कलादिक से है हीन।
है पशु ही साक्षात् मनुज वह केवल सींग पूँछ से हीन।।
घास न खाकर भी जीते हैं, जग में जो वे नर हतभाग्य।
समझो इसे अन्य पशुओं का इस जग बीच परम सौभाग्य।

विद्या नर का श्रेष्ठ रूप है, छिपा हुआ धन परम अनूप।
विद्या भोग कीर्ति सुख देती, विद्या गुरुओं की गुरु रूप।।
विद्या सद्बान्धव विदेश में, विद्या ही है देव महान।
विद्या ही नृप पूज्य, नहीं धन, विद्याहीन मनुज पशु जान।।

नीच पुरुष विघ्नों के भय से करते नहीं कार्य प्रारम्भ।
विघ्नों के आने पर मध्यम तज देते हैं कर आरम्भ।।
पर विघ्नों के द्वारा ताड़ित होने पर भी बारम्बार।
उत्तम जन प्रारब्ध कर्म को कभी न तजते किसी प्रकार।।

जिसके पास जगत में धन है, है नर वही कुलीन महान।
पण्डित वही, शास्त्र का ज्ञाता, और वही सबसे गुणवान।।
वही सुवक्ता, दर्शनीय अरु, करते सब उसका विश्वास।
निश्चय ही जग में गुण सारे, कंचन में करते हैं वास।।

plakob.com

धारण करना धैर्य विपद् में, अरु उन्नति में क्षमा प्रदान।
और सभा में वाक्–चातुरी समरांगण में शौर्य महान।।
यश में अभिरुचि और व्यसन है केवल शास्त्रों का अभ्यास।
सदा महात्मा पुरुषों में ये करते गुण स्वभाव से वास।।

गुरु–पद–नति शिर की शोभा है, और हाथ की शोभा दान।
सत्य वचन मुख की शोभा है, भुज दण्डों की शौर्य महान।।
उर की शोभा स्वच्छ वृत्ति है, शास्त्र श्रवण कानों की दिव्य।
सुजनों के ऐश्वर्य बिना भी हैं ये प्रिय! आभूषण भव्य।।

पाप कर्म से सदा बचाता, करता है हितकर उपदेश।
गुह्य बात को सदा छिपाता, प्रगटाता है गुण सविशेष।।
अरु विपत्ति में साथ न तजता, और समय पर देता द्रव्य।।
सन्त पुरुष बतलाते हैं ये, श्रेष्ठ मित्र के लक्षण भव्य।।

चाहे नीति निपुण जन निन्दें, चाहे संस्तुति करें अपार।
चाहे लक्ष्मी आवे अथवा चली जाय इच्छा अनुसार।।
चाहे मरण आज ही होवे या युगान्त में जाय शरीर।
किन्तु न्याय–पथ से पद भर भी, कभी न विचलित होते धीर।।

(भर्तृहरि द्वारा रचित नीतिशतक के श्लोकों का उक्त भावानुवाद कवि गोपाल गुप्त ने किया है।)

अभ्यास

1. कविता में किन लोगों को 'हतभाग्य' कहा गया है ?
2. विद्या को छुपा हुआ धन क्यों कहा गया है?
3. किस प्रकार के लोग कार्य करना कभी नहीं छोड़ते?
4. सारे गुण कंचन में वास करते हैं–व्याख्या करो।
5. महात्मा के किन्हीं चार गुणों का उल्लेख करो।
6. 'सत्य वचन मुख की शोभा है' – उक्ति पर आठ–दस पंक्तियों में अपने विचार लिखो।
7. न्याय–पथ पर टिके रहने के लिए धीर पुरुष प्रायः किन–किन बातों की परवाह नहीं करते?
8. आपके विचार से एक श्रेष्ठ मित्र में क्या गुण होने चाहिए? आप में इनमें से कौन से गुण विद्यमान हैं?
9. 'गुरु–पद–नति शिर की शोभा है'– पंक्ति का अर्थ स्पष्ट करो।
10. कल्पना करो, कोई कार्य करते समय आपके सामने कुछ बाधाएँ आ रही हैं। तब आप क्या करोगे– काम को बीच में छोड़ दोगे? किसी की सहायता से पूरा करोगे? स्वयं कोई तरकीब लगाकर निपटाओगे?
11. उक्त सभी पदों को संस्कृत के मूल श्लोक रूप में खोजकर संकलित करो।

Pdsktoo.com

12 दुनिया में नेकी और बदी

है दुनिया जिस का नाम मियाँ ये और तरह की बस्ती है।
जो महंगों को तो महंगी है और सस्तों को ये सस्ती है।
यां हरदम झगड़े उठते हैं, हर आन[1] अदालत कस्ती है।
गर मस्त करे तो मस्ती है और पस्त[2] करे तो पस्ती है।
कुछ देर नहीं अँधेर नहीं, इंसाफ और अद्ल–परस्ती[3] है।
इस हाथ करो उस हाथ मिले, याँ सौदा दस्त–बदस्ती[4] है।

जो और किसी का मान रखे, तो उसको भी अरमान मिले।
जो पान खिलावे पान मिले, जो रोटी दे तो नान मिले।
नुक़सान करे नुक़सान मिले, एहसान[5] करे एहसान मिले।
जो जैसा जिस के साथ करे, फिर वैसा उसको आन मिले।
कुछ देर नहीं अँधेर नहीं, इंसाफ और अद्ल–परस्ती है।
इस हाथ करो उस हाथ मिले, याँ सौदा दस्त–बदस्ती है।

जो और किसी की जां बख़्शे[6] तो उसको भी हक़ जान रखे।
जो और किसी की आन रखे तो, उसकी भी हक़ आन रखे।
जो यां का रहने वाला है, ये दिल में अपने जान रखे।
ये चरत–फिरत का नक़शा है, इस नक़शे को पहचान रखे।
कुछ देर नहीं अँधेर नहीं, इंसाफ और अद्ल–परस्ती है।
इस हाथ करो उस हाथ मिले, याँ सौदा दस्त–बदस्ती है।

जो पार उतारे औरों को, उसकी भी पार उतरनी है।
जो गर्क़[7] करे फिर उसको भी, डुबकूँ–डुबकूँ करनी है।
शम्शीर[8] तीर बन्दूक़ सिनाँ[9] और नश्तर तीर नहरनी है।
यां जैसी जैसी करनी है, फिर वैसी वैसी भरनी है।
कुछ देर नहीं, अँधेर नहीं, इंसाफ और अद्ल–परस्ती है।
इस हाथ करो उस हाथ मिले, याँ सौदा दस्त–बदस्ती है।

है खटका उसके हाथ लगा, जो और किसी को दे खटका।
और ग़ैब[10] से झटका खाता है, जो और किसी को दे झटका।
चीरे के बीच में चीरा है, और टपके बीच जो है टपका।
क्या कहिए और 'नजीर' आगे, है रोज तमाशा झटपट का।
कुछ देर नहीं अँधेर नहीं, इंसाफ और अद्ल–परस्ती है।
इस हाथ करो उस हाथ मिले, याँ सौदा दस्त–बदस्ती है।

– नज़ीर अकबराबादी

1. क्षण, पल 2. नीच, अधम 3. न्याय पूजा 4. हाथों हाथ, तुरन्त 5. उपकार
6. प्राण प्रदान कर 7. पानी में डुबाना 8. तलवार 9. भाला 10. पीठ पीछे, भाग्य

Pdakoo.com

अभ्यास

1. कवि ने किस प्रकार की दुनिया का उल्लेख किया है?
2. प्रस्तुत छन्दों में कवि ने आदमी के सकारात्मक और नकारात्मक भावों को परस्पर किन–किन रूपों में दिखाया है?
3. इन छन्दों को पढ़कर आपके मन में 'नेकी' के बारे में क्या धारणा बनती है?
4. कवि ने डुबकूँ डुबकूँ करनी है, वाक्यांश का प्रयोग किसके लिए किया है और क्यों?
5. कवि ने किस नक़शे को पहचानने की बात कही है? यह नक़शा (नक्शा) कैसा है?

6. कवि ने जिस दुनिया का उल्लेख किया है, उसके सौदे की क्या विशेषताएँ हैं?

7. प्रस्तुत छन्दों में से आपको कौन–सी बात अच्छी लगी, जो आपने स्वयं अनुभव भी की हो?

8. यदि आप कवि की जगह होते तो किस प्रकार की दुनिया की कल्पना करते? उस दुनिया की क्या विशेषताएँ होतीं?

9. एहसान करने से एहसान मिलता है। आपके पास जबकि धन नहीं है, ऐसे में आप देश के प्रति क्या करना चाहोगे?

10. आपके घर में एक मेहमान आया है। आप उनका मान–सम्मान किस प्रकार करोगे?

11. विद्यालय के मैदान में कुछ बच्चे खेल रहे हैं। आपका एक सहपाठी जो ठीक प्रकार से चल नहीं सकता है, उन बच्चों के साथ खेलना चाहता है। वे बच्चे उसे खेल में शामिल करने की बजाय उसका मज़ाक उड़ाते हैं। ऐसी परिस्थिति में आप क्या करना चाहोगे?

12. अपने जीवन अथवा परिवेश से कोई एक ऐसा अनुभव बताओ, जिसमें आपने नेकी का काम करके अच्छा महसूस किया हो।

Pdakoo.com

13

राष्ट्रीयता का विकास

राष्ट्रीयता किसी भी देश की आत्मा होती है। इसकी सुदृढ़ता तथा व्यापकता में ही देश की समृद्धि एवं प्रगति निहित है। जो देश आन्तरिक रूप से जितना अधिक सघन और एक है, वह उतना ही सशक्त और प्रभावशाली भी होता है। जिस देश के जन–समुदाय में जितनी अधिक सद्भावना, सहिष्णुता एवं बलिदान की भावना है, वह उतना ही अधिक ऊर्जावान व विकसित होता है।

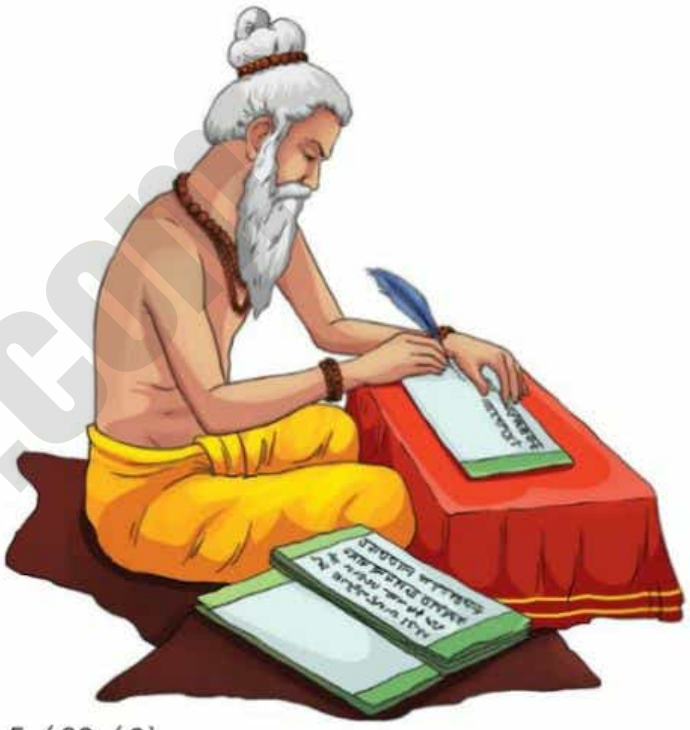

वैदिक ऋषि ने ऋग्वेद में तत्कालीन जन–समुदाय की राष्ट्रीय भावना को वाणी दी है–

व्यचिष्ठे बहुपाय्ये यतेमहि स्वराज्ये।

(ऋग्वेद–5/66/6)

अर्थात् हम विविध, विशाल एवं बहुपथ, बहुरक्षित स्वराज्य के कल्याणार्थ प्रयत्नशील रहेंगे। इस उक्ति से स्पष्ट है कि प्राचीनतम समाज में भी विविध मतों एवं विचारों को मानते हुए राष्ट्रीय सुरक्षा एवं कल्याण कार्य के लिए संकल्प था। स्पष्ट है कि राष्ट्रीयता एक मानवीय उपलब्धि, मानवीय स्वभाव और सामुदायिक जीवन क्रम है, जो एक निश्चित भू–भाग के लोगों में स्वतः उद्भूत होती है। यजुर्वेद में भी कहा गया है–

वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः। यजुर्वेद–9/23

अर्थात् हमें राष्ट्र हित में जाग्रत रहना चाहिए। हम अपने राष्ट्र में सजग, सावधान होकर पुरोहित, नेतृत्वकर्ता बनें।

राष्ट्रीय संकट की घड़ी में जब सारा राष्ट्र एक तन, एक मन होकर खड़ा हो जाता है, तब राष्ट्रीयता का विकास जीवन्त हो उठता है। सच तो यह है कि राष्ट्रीयता ही राष्ट्र की आत्मा और शक्ति होती है।

Pdaco.com

राष्ट्रीयता तथा स्वदेश प्रेम प्रायः समानार्थी हैं। इसका अस्तित्व मानव स्वभाव के मूल में है। वास्तव में राष्ट्रीयता को एक ऐसी शक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो एक निश्चित भू–भाग के जन–समुदाय का शासन की निरंकुशता के विरुद्ध अपने अधिकारों को सुरक्षित रखने तथा बाह्य आक्रमणों से स्वाधीनता की रक्षा करने के उद्देश्य से एकता के सूत्र में बाँधती है।

राष्ट्रीयता के विकास के लिए अनिवार्य तत्त्व हैं– राष्ट्र के प्रति समर्पण भावना, भाषा, संस्कृति, धर्म, समुदाय, भूगोल आदि। इन सब तत्त्वों का निर्माण और संरक्षण समर्पित जन–समुदाय द्वारा ही होता है। जब तक राष्ट्र का एक–एक घटक अपने कर्तव्य का निष्ठा से पालन नहीं करेगा, तब तक राष्ट्र का निर्माण सम्भव नहीं। यदि एक भी तत्त्व के निर्माण में कमी रही तो राष्ट्र रूपी विशाल भवन की नींव कमजोर रह जाएगी। भारत जैसे बहुभाषी एवं बहुधर्मी देश के लिए यह भी आवश्यक है कि सभी धर्मों और सम्प्रदायों को सम्मान देते हुए राष्ट्र को सर्वोपरि मानें। मूलतः राष्ट्र प्रथम होता है। अन्य विश्वास या मत उसके बाद ही होते हैं। अतः सभी समुदायों में राष्ट्र के प्रति एकनिष्ठ भाव होना चाहिए। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि जिस राष्ट्र को सही दिशा निर्देश करने वाले राष्ट्रनायकों का नेतृत्व सुलभ हो जाता है, वहाँ सामान्य–जन भी उससे प्रेरित होकर राष्ट्रीयता को विकसित करने में लग जाता है। भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में जिस राष्ट्रीयता का विकास हुआ, उसका नेतृत्व करने वालों में महात्मा गाँधी, सरदार पटेल, शहीद भगत सिंह, भीमराव अम्बेडकर, सुभाषचन्द्र बोस, वीर सावरकर आदि का नाम लिया जा सकता है।

राष्ट्रीयता के विकास में प्रत्येक व्यक्ति को अपना योगदान एवं बलिदान देना होगा। प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि, क्षमता और योग्यता के अनुसार इनमें से किसी भी तत्त्व के निर्माण में जुट सकता है। राष्ट्र की भौगोलिक सुरक्षा करने के लिए सैनिक प्राणों का बलिदान देने के लिए तैयार रहते हैं। इसी प्रकार राष्ट्र के भीतर विभिन्न कार्य करने वाले लोग भी राष्ट्रीयता के विकास में अपना योगदान दे सकते हैं। धर्म नेता सभी धर्मों में सौहार्द, सद्भाव बनाने, भाषाविद् भाषाओं के मध्य सामंजस्य बनाने, संस्कृति के निर्माता मिली–जुली संस्कृति विकसित करने में योगदान देकर राष्ट्रीयता का विकास कर सकते हैं। जो जहाँ, जिस क्षेत्र में कार्यरत है, वहाँ राष्ट्रीयता के विकास में योगदान देकर वह देश–प्रेम की भावना प्रदर्शित कर सकता है।

राष्ट्रीयता का सबसे बड़ा गुण है कि वह देशवासियों के हृदय में देश–प्रेम की भावना को जगाती है। जब देश के लोग अपने देश को प्रेम करने लगते हैं, तब निश्चय ही उस देश की राष्ट्रीयता का विकास सभी क्षेत्रों में होता है। वे राष्ट्र के लिए हँसते–हँसते अपना सर्वस्व अर्पित कर देते हैं। उनके मन से संकीर्ण एवं स्वार्थ भावना का लोप हो जाता है। राष्ट्रीयता भ्रातृ–भाव जगाती है। राष्ट्रीय संस्कृति सह–अस्तित्व एवं सहयोग की भावना विकसित करती है। संकीर्णता, स्वार्थता, कट्टरता राष्ट्रीयता के विकास में बाधक तत्त्व हैं। स्वार्थवश व्यक्ति राष्ट्रहित को दाँव पर लगा देता है, जिससे देश आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक रूप से क्रमशः गुलामी की ओर अग्रसर होता है। गुलामी की उन बेड़ियों को तोड़ने के लिए राष्ट्रीयता की भावना को विकसित करना अत्यन्त आवश्यक है। अतः निजी लाभ–हानि की आकांक्षा से सर्वथा मुक्त होकर राष्ट्रहित में कार्य करना राष्ट्रीयता का विकास है। अपने जातीय, वर्गीय, समुदाय व सम्प्रदाय के

हित प्रायः इसकी सीमा रेखा बन जाते हैं। इनसे मुक्त होकर ही राष्ट्रीयता के विकास का विराट स्वप्न साकार कर सकते हैं। इस विषय में कवि चन्द्रसेन विराट की पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं–

भिन्न–भिन्न भाषाएँ भूषा यद्यपि धर्म अनेक
किन्तु सभी भारतवासी हैं और हृदय से एक
तुझ पर बलि है हृदय–हृदय का स्पन्दन मेरे देश
वन्दन मेरे देश–तेरा वन्दन मेरे देश।

राष्ट्रीयता की भावना हमें तमाम संकीर्णताओं, स्वार्थों से ऊपर उठाकर व्यापक जनहित, राष्ट्रहित में कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। मानव को मानव से मिलाती है। राष्ट्रीयता का विकास विश्व मानवता के निर्माण की आधारभूमि है। मशहूर शायर इक़बाल की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

खाक–ए–वतन का मुझको हर ज़र्रा देवता है।
अर्थात् मातृ–भूमि की धूलि का कण–कण मेरे लिए देवता के समान है।

अभ्यास

1. राष्ट्रीयता किसी भी देश की आत्मा होती है। कैसे? स्पष्ट करो।
2. राष्ट्रीयता के विकास के लिए अनिवार्य तत्त्व कौन से हैं?
3. राष्ट्रीयता के बाधक तत्त्वों को पहचानकर लिखो।
4. राष्ट्रीयता की भावना सिखाने–पढ़ाने से नहीं आती। यह स्वतः उद्भूत होती है। इस विषय पर अपने विचार व्यक्त करो।
5. राष्ट्रहित में अपना हित त्याग देना चाहिए। आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं? तर्क देकर स्पष्ट करो।
6. विद्यार्थी रूप में आप राष्ट्रीयता के विकास में किस प्रकार योगदान कर सकते हैं?
7. कर्तव्य का पालन करना भी राष्ट्रीयता के विकास की एक कड़ी है, उदाहरण सहित लिखो।
8. स्वयं को राष्ट्रप्रेमी कहलवाने के लिए आप क्या कार्य करेंगे?
9. 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' – उक्ति का अर्थ स्पष्ट करो।
10. 'मेरा भारत महान' विषय पर अपने विचार लिखो।
11. सामुदायिक सद्भावना एवं सहिष्णुता राष्ट्रीयता के आधारस्तम्भ हैं–कक्षा में चर्चा करो।
12. राष्ट्रप्रेम पर आधारित कोई कविता चार्ट पर लिखो और कक्षा में लगाओ।

Pdfkoo.com

14 मानवता की राह

भारतीय ऋषियों ने विश्व कल्याण की कामना करते हुए लिखा है–

'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः,

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।'

अर्थात् सब सुखी हों, सब नीरोगी हों, सबका कल्याण हो, किसी को भी दुःख प्राप्त न हो। ऐसी पुनीत भावनाएँ भारतवर्ष में सदैव प्रवाहित होती रही हैं। वास्तव में दया और परोपकार के समान न कोई दूसरा धर्म है और न पुण्य।

हमारी संस्कृति में मानव मात्र के कल्याण की भावना निहित है। हम जो भी कार्य करते हैं, सदैव 'बहुजनहिताय' और 'बहुजनसुखाय' की दृष्टि से करते हैं। यही संस्कृति भारतवर्ष की आदर्श संस्कृति है। इस संस्कृति की मूल भावना 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के पवित्र उद्देश्य पर आधारित है।

मानव समाज के लिए ही नहीं, अपितु विश्व के प्राणी वर्ग के लिए भी कुछ ऐसे अमूल्य एवं उपासना करने योग्य उपयोगी तत्त्व हैं, जो जीवन को पवित्र, संयमित और विकसित करने के लिए अनिवार्य साधन हैं। वे तत्त्व संख्या से तीन हैं– धर्म, दर्शन और नीति।

जिस प्रकार जैनाचार्यों की दृष्टि में मुक्ति के लिए सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक् चरित्र का समन्वय अनिवार्य है, जिस प्रकार वैज्ञानिक मार्टिन्यू के मत से लौकिक सिद्धि के लिए विश्वास–विचार और आचार का समन्वय अत्यावश्यक है, जिस प्रकार श्रीकृष्ण की मान्यता में जीवन मुक्ति के लिए भक्ति–ज्ञान–कर्म का समन्वय अनिवार्य है, उसी प्रकार जीवन शुद्धि के लिए धर्म, दर्शन एवं नीति इन तीन तत्त्वों का समन्वय होना अनिवार्य है। नैतिकता के बिना मानव में मानवता त्रिकाल में भी सम्भव नहीं। नीति वाक्य प्रसिद्ध है–

''जागा सो पाया, सोया सो खोया।''

मानवता 'मानव' होने का भाव है। मात्र मानव देह धारण कर लेने से ही मानवता की सिद्धि नहीं हो जाती, इसके लिए मानवीय सद्गुणों का वरण आवश्यक है, जिनसे मनुष्य की मनुष्यता प्रमाणित होती है। मानवता व्यक्ति की आदर्श आचार–संहिता है। मनु ने धर्म के जिन दस लक्षणों का उल्लेख किया है– वे आचारमूलक ही हैं। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु'– यही मानवता का मूल मन्त्र है।

मानवता हमारी आस्था की सच्चाई का प्रतीक है। जिन्होंने मानवता छोड़ दी, समझो कि उन्होंने सब कुछ त्याग दिया। मानवता ही हमें मशीन और रोबोट से अलग करती है क्योंकि इनमें भावनाएँ नहीं होती। इसलिए ये कुछ भी महसूस नहीं करते। यह मानवता ही है, जो हमारे भीतर कोमलता, नम्रता, तर्कसंगतता, शिष्टता और वफ़ादारी के बीज बोती है।

अलग–अलग सन्दर्भों या जीवन–स्थितियों के आधार पर मानवता कई रूपों में दृष्टिगोचर होती है। कहीं यह उत्सर्ग के रूप में, कहीं करुणा के रूप में, कहीं सेवा–भाव के रूप में तो कभी सहनशीलता के रूप में प्रस्फुटित होती है। व्यापक हित के लिए भगवान शंकर का विषपान करना, अपने चुम्बकीय व्यक्तित्व से महात्मा बुद्ध द्वारा डाकू अंगुलिमाल को सदाचारी बना देना, महर्षि कर्वे द्वारा स्त्री शिक्षा की प्रेरणा देना, महात्मा गाँधी द्वारा अछूतोद्धार–आन्दोलन चलाना, बाबा आमटे द्वारा कुष्ठ–रोगियों की सेवा करना–ये सब मानवता की ही द्योतक चेष्टाएँ हैं। वस्तुतः मानवता परोपकार, संवेदनशीलता, सद्भावना, मूल्यनिष्ठा आदि अनेक दिशाओं में विकसित होती है। ऋषि–मुनि मानवता को बहुत अधिक महत्त्व देते थे। वे कहते थे कि ईश्वर की प्राप्ति का माध्यम है दया– 'जीवे दया नामे रुचि' अर्थात् व्यक्ति में जीव मात्र के प्रति दया तथा प्रभु के नाम स्मरण में रुचि होनी चाहिए।

मानवता की सच्ची कसौटी विपरीत परिस्थितियों में भी मानवता पर अडिग रहना ही है। केवल वाणी के स्तर पर मानवता का स्वाँग भरना एक कुचेष्टा है। मानवता कार्य रूप में परिणत होनी चाहिए। देश और जाति की रक्षा के लिए गुरु गोबिन्द सिंह ने अपने पुत्रों की बलि चढ़ा दी। यही सच्ची मानवता है, जो विपरीत परिस्थितियों में भी दबती नहीं अपितु अपनी अमोघ शक्ति के साथ प्रस्फुटित हो ही जाती है।

मानवता विश्व मंगल की प्रेरक शक्ति है, कभी–कभी इसका छद्म रूप भी दिखाई दे जाता है। जो वस्तुतः स्वार्थपूर्ति का साधन ही होता है। देश में ऐसे भी मनुष्य कम नहीं हैं, जो प्रान्तद्वेष, धर्मद्वेष, वर्णद्वेष और जातिद्वेष के कारण संगठित होकर एक साथ विचार नहीं करते, कार्य नहीं करते, वार्तालाप नहीं करते और विद्रोह को खड़ा करते हैं। इस प्रकार के मनुष्यों के प्रति यही नीतिवचन है–

''संगच्छध्वं, संवदध्वं, सं वो मनांसि जानताम्'' ऋग्वेद 10/191/2

अर्थात् सभी बन्धु प्रेम से मिलकर चलें व बोलें और सभी ज्ञानी बनें। सब के मन में एक जैसे विचार हों। इस नीति व मानवीयता से देश के, समाज के, शासन के और घर के कार्य सफल होते हैं। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि मानव ज्यों–ज्यों धन का अर्जन करता जाता है, त्यों–त्यों तृष्णा बढ़ती चली जाती है, उसको सन्तोष नहीं होता। मानवता के गुण को पोषित करने हेतु सन्तोषी होना आवश्यक है। तभी आचार्य विद्यासागर भी यही नीति व्यक्त करते हैं –

"पेट भरो, पेटी मत भरो।"

मानवता के विकास में आनुवंशिकता तथा परिवेश दोनों की ही महती भूमिका रहती है। व्यक्ति चाहे तो अपने विवेक के सहयोग से निरन्तर अभ्यास करता हुआ आनुवंशिक न्यूनताओं पर भी विजय पा सकता है तथा परिवेश से भी सारगर्भित तत्त्वों को ग्रहण कर सकता है। राक्षस कुल में जन्म लेकर तथा राक्षसी परिवेश से घिरे रहकर भी विभीषण अपनी 'मानवता' को बचा सके थे– अपने सतत सात्त्विक चिन्तन तथा अभ्यास के बल पर। महापुरुषों का संसर्ग, उत्कृष्ट ग्रन्थों का अध्ययन–श्रवण, अर्चन–पूजन, चिन्तन–मनन आदि मानवता के पोषक उपादान हैं, इनके निरन्तर अभ्यास से मानवता का विकास किया जा सकता है।

निःसन्देह दया, करुणा, सहानुभूति आदि गुण ही मनुष्य को सच्चा मानव बनाते हैं। दया रहित मानव के धार्मिक होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। उर्दू के शायर ने सच ही कहा है–

"इबादत है दुखियों की इमदाद करना जो नाशाद हैं उनका दिल शाद करना

खुदा की नमाज़ और पूजा यही है जो बरबाद हों उनको आबाद करना।।"

हमारा मन उदारता, दया और करुणा से भरपूर होना चाहिए। ऐसी स्थिति में ही हम स्वयं को मानव कह सकते हैं। यदि समाज से दया की भावना का लोप हो जाता है तो मानवता रसातल में चली जाएगी। आज भी विश्वयुद्ध की विभीषिकाएँ संसार को श्मशान का रूप देने के लिए व्याकुल हैं। आज आवश्यकता है कि मानव स्वार्थ भावना का परित्याग करके 'वसुधैव कुटुम्बकम्" के सिद्धान्त पर चले। मानवता का कल्याण इसी में है। जब तक जन–जन में इस मूल मन्त्र का प्रवेश नहीं होगा, तब तक मानव सुखी नहीं होगा। मानवता पशुत्व से देवत्व की ओर ले जाने वाला अभियान है। यह ईसा–नानक–गाँधी–कबीर–बुद्ध और महावीर का दिखाया दिव्य मार्ग है। आइए, मानवीय अस्तित्व को प्रमाणित करने वाली इस मानवता के प्रति समर्पित हों। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी के अनुसार–

यही पशु–प्रवृत्ति है कि आप आप ही चरे

वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे।

Plakoo.com

अभ्यास

1. 'मानवता' शब्द का अर्थ स्पष्ट करो।
2. मानवता का 'छद्म' रूप किन कार्यों से प्रकट होता है?
3. मानवता की सच्ची परख किन परिस्थितियों में होती है?
4. ''जागा सो पाया, सोया सो खोया'' – उक्ति का अर्थ (भाव) स्पष्ट करो।
5. आधुनिक युग में मानवता के लुप्त होने के कौन–कौन से प्रमुख कारण हैं?
6. आपकी दृष्टि में सच्चे मानव में किन–किन गुणों का समावेश अनिवार्य है?
7. मानवता के विकास में आनुवंशिकता तथा परिवेश की क्या भूमिका है?
8. विपरीत परिस्थितियों में भी विभीषण ने अपनी 'मानवता' को किस प्रकार बचाया था?
9. प्रकृति अपने किन कार्यों द्वारा परोपकार हेतु प्रेरित करती है?
10. पौराणिक इतिहास से किन्हीं दो महापुरुषों के मानवता के पोषक कार्यों का वर्णन करो।
11. राष्ट्र–निर्माण में मानवता कितनी सहायक है, उदाहरण सहित बताओ।
12. विभिन्न धर्म ग्रन्थों में कहे गए मानवता सम्बन्धी कथनों का संकलन करो।

Pdakoo.com

15 महात्मा बुद्ध व बोध कथाएँ

जो नित्य एवं स्थायी प्रतीत होता है, वह भी विनाशी है। जहाँ जन्म है, वहाँ मरण भी है। ऐसे महान विचारों को आत्मसात करते हुए महात्मा बुद्ध ने बौद्ध मत की स्थापना की, जो विश्व के प्रमुख सम्प्रदायों में से एक है।

महात्मा बुद्ध का जन्म कपिलवस्तु के पास लुम्बिनी में 563 ई. पू. हुआ था। उनकी माता का नाम महामाया था, जो देवदह की राजकुमारी थी। उनके पिता शुद्धोदन शाक्यवंश के क्षत्रिय राजा थे। महात्मा बुद्ध के बचपन का नाम सिद्धार्थ था। सिद्धार्थ के जन्म के सातवें दिन माता का देहान्त हो जाने के कारण उनका पालन पोषण उनकी विमाता प्रजापति गौतमी ने किया। सिद्धार्थ का विवाह 16 वर्ष की आयु में यशोधरा से किया गया। उनका एक पुत्र हुआ, जिसका नाम राहुल रखा गया। चार दृश्यों (वृद्ध, रोगी, मृतव्यक्ति एवं संन्यासी) ने उनके जीवन को वैराग्य के मार्ग की ओर मोड़ दिया। मात्र 29 वर्ष की अवस्था में एक रात सिद्धार्थ अपने पुत्र व पत्नी को सोता हुआ छोड़कर गृह त्यागकर ज्ञान की खोज में निकल पड़े। सात दिन व सात रात समाधिस्थ रहने के बाद आठवें दिन वैशाख पूर्णिमा के दिन इन्हें सच्चे ज्ञान की अनुभूति हुई। इस घटना को 'सम्बोधि' कहा गया। जिस वट वृक्ष के नीचे उनको ज्ञान प्राप्त हुआ था, उसे 'बोधि वृक्ष' तथा गया को 'बोध गया' कहा जाता है।

महात्मा बुद्ध ने अपना सर्वप्रथम उपदेश सारनाथ में दिया। बौद्ध मत के उपदेशों का संकलन 'त्रिपिटक' के अन्तर्गत किया गया। हिन्दू मत में वेदों का जो स्थान है, बौद्ध मत में वही स्थान त्रिपिटक का है।

महात्मा बुद्ध ने क्रोध को अकुशल धम्म, पाप धम्म कहा है क्योंकि क्रोध के कारण व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन की शान्ति भंग होती है। महात्मा बुद्ध कहते हैं, ''क्रोध को अक्रोध से, बुराई को अच्छाई से, अनुदारता को उदारता से और असत्य को सत्य से जीतना चाहिए।''

आइए, बोध कथाओं में वर्णित जीवन मूल्यों का अध्ययन करें।

1. आत्मनियन्त्रण की कला

एक लड़का अत्यन्त जिज्ञासु था। उसे जहाँ भी कोई नई चीज़ सीखने को मिलती, वह उसे सीख लेता। उसने तीर बनाने वाले से तीर, नाव बनाने वाले से नाव, मकान बनाने वाले से मकान बनाना और बाँसुरी बजाने वाले से बाँसुरी बजाना सीखा। इस प्रकार वह अनेक कलाओं में तो प्रवीण हो गया लेकिन उसमें अहंकार आ गया। वह अपने परिजनों व मित्रों से कहता, 'इस दुनिया

में मुझ–सा प्रतिभा का धनी कोई नहीं है।'

एक बार शहर में गौतम बुद्ध का आगमन हुआ। उन्होंने जब उस लड़के की कला और अहंकार के बारे में सुना तो सोचा कि इस लड़के को एक ऐसी कला सिखानी चाहिए, जो अब तक सीखी गई कलाओं से बड़ी हो। वे सहज भाव से उसके पास गए।

लड़के ने पूछा, 'आप कौन हैं?' बुद्ध बोले, "मैं अपने शरीर को नियन्त्रण में रखने वाला एक आदमी हूँ।" लड़के ने उन्हें अपनी बात स्पष्ट करने के लिए कहा। तब उन्होंने कहा, "जो तीर चलाना जानता है, वह तीर चलाता है, जो मकान बनाना जानता है, वह मकान बनाता है, परन्तु जो ज्ञानी है, वह स्वयं पर शासन करता है।"

लड़के ने पूछा, "वह कैसे?" बुद्ध ने उत्तर दिया, "यदि कोई उसकी प्रशंसा करता है, तो वह अभिमान से फूलकर खुश नहीं हो जाता और यदि उसकी निन्दा करता है, तो भी वह शान्त बना रहता है। ऐसे व्यक्ति ही सदा आनन्द में रहते हैं।" लड़का जान गया कि सबसे बड़ी कला तो स्वयं को वश में रखना है। कथा का सार यह है कि आत्मनियन्त्रण जब सध जाता है, तो समभाव आता है। यही समभाव अनुकूल–प्रतिकूल स्थितियों में हमें प्रसन्न रखता है।

2. कहीं पहुँचना है तो चलना होगा

एक व्यक्ति प्रतिदिन महात्मा बुद्ध का प्रवचन सुना करता था। उसका यह क्रम एक महीने तक चला लेकिन उसके जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। महात्मा बुद्ध उस व्यक्ति को बार–बार समझाते थे कि लोभ, द्वेष और मोह–पाप के मूल हैं, इन्हें त्यागो। परन्तु इन बुराइयों से बचना तो दूर, वह उनमें और रमता गया। महात्मा बुद्ध कहते थे कि क्रोध करने वाले पर जो क्रोध करता है, उसका अधिक अहित होता है लेकिन जो क्रोध का जवाब क्रोध से नहीं देता, वह एक बड़ा युद्ध जीत लेता है। बुद्ध के प्रवचन सुनने के बाद भी उस व्यक्ति का स्वभाव उग्रतर होता जा रहा था। एक दिन वह परेशान होकर बुद्ध के पास गया और उन्हें प्रणाम–निवेदन करके अपनी समस्या बताई।

बुद्ध ने कहा, "कहाँ के रहने वाले हो?"

वह व्यक्ति बोला,"श्रावस्ती का।"

बुद्ध ने पूछा, ''राजगृह से श्रावस्ती कितनी दूर है?'' उसने बता दिया।

''कैसे जाते हो वहाँ?'' बुद्ध ने पूछा। उसने हिसाब लगा कर वह भी बता दिया।

'ठीक। अब यह बताओ, यहाँ बैठे–बैठे राजगृह पहुँच सकते हो?'

''यह कैसे हो सकता है? वहाँ पहुँचने के लिए तो चलना होगा।''

बुद्ध बड़े प्यार से बोले, ''तुमने सही कहा। चलने पर ही मंज़िल तक पहुँचा जा सकता है। इसी तरह अच्छी बातों का असर तभी पड़ता है, जब उन पर अमल किया जाए। ज्ञान के अनुसार कर्म न होने पर वह व्यर्थ है।''

अभ्यास

1. किन दृश्यों से प्रभावित होकर गौतम बुद्ध का जीवन वैराग्य मार्ग की ओर मुड़ गया?
2. गौतम बुद्ध व जिज्ञासु लड़के की बोध कथा से क्या शिक्षा मिलती है?
3. महात्मा बुद्ध ने क्रोध के विषय में क्या कहा है?
4. क्रोध हमारा शत्रु कैसे है?
5. अनुकूल–प्रतिकूल स्थिति में प्रसन्न रहने का क्या भाव है?
6. महात्मा बुद्ध के अनुसार सच्चा ज्ञानी कौन है?
7. महात्मा बुद्ध ने अपना सर्वप्रथम उपदेश कहाँ दिया व उनके सभी उपदेश किस ग्रन्थ में संकलित हैं?
8. कहीं पहुँचना है तो चलना होगा, का भाव स्पष्ट करो।
9. ज्ञान की बात पर अमल न किया जाए तो ज्ञान व्यर्थ है, दैनिक जीवन से उदाहरण देकर स्पष्ट करो।
10. परेशानी की अवस्था में ज्ञानी लोगों से राय ले लेनी चाहिए। आप इस कथन से कहाँ तक सहमत हैं? विस्तार से लिखो।
11. महात्मा बुद्ध की सूक्तियों का संकलन कर चार्ट पर लिखो।
12. बौद्ध धर्म की कथाओं को जानकर कक्षा में सुनाओ व उन पर चर्चा करो।

pdakoo.com

16

संकट में बुद्धिमानी

एक वन में वट वृक्ष की जड़ में सौ दरवाजों का बिल बनाकर पलित नाम का एक बुद्धिमान चूहा रहता था। उसी वृक्ष की शाखा पर लोमश नाम का एक बिलाव भी रहता था। एक बार एक चाण्डाल ने आकर उस वन में डेरा डाल दिया। सूर्यास्त होने पर वह अपना जाल फैला देता था और उसकी ताँत की डोरियों को यथास्थान लगाकर मौज से अपने झोंपड़े में सो जाता था। रात में अनेक जीव उस जाल में फँस जाते थे, जिन्हें वह सवेरे पकड़ लेता था। बिलाव यद्यपि बहुत सावधान रहता था तो भी एक दिन उसके जाल में फँस ही गया। यह देखकर पलित चूहा निर्भय होकर वन में आहार खोजने लगा। इतने ही में उसकी दृष्टि चाण्डाल के डाले हुए (फँसाने के लिए) माँस–खण्डों पर पड़ी। वह जाल पर चढ़कर उन्हें खाने लगा। इतने में ही उसने देखा कि हरिण नाम का नेवला चूहे को पकड़ने के लिए जीभ लपलपा रहा था। अब चूहे ने जो ऊपर की ओर वृक्ष पर भागने की सोची तो उसने वट की शाखा पर रहने वाले अपने घोर शत्रु चन्द्रक नामक उल्लू को देखा। इस प्रकार इन शत्रुओं के बीच में पड़कर वह डर गया और चिन्ता में डूब गया।

इसी समय उसे एक विचार सूझ गया। उसने देखा कि बिलाव संकट में पड़ा है, इसलिए वह इसकी रक्षा कर सकेगा। अतः उसने उसकी शरण में जाने की सोची। उसने बिलाव से कहा– 'भैया! अभी जीवित हो न? देखो। डरो मत। यदि तुम मुझे मारना न चाहो तो मैं तुम्हारा उद्धार कर सकता हूँ। मैंने खूब विचार कर अपने और तुम्हारे उद्धार के लिए उपाय सोचा है। उससे हम दोनों का हित हो सकता है। देखो, ये नेवला और उल्लू मेरी घात में बैठे हुए हैं। इन्होंने अभी तक मुझ पर आक्रमण नहीं किया है, इसलिए बचा हुआ हूँ। अब तुम मेरी रक्षा करो और तुम जिस जाल को काटने में असमर्थ हो, मैं उसे काटकर तुम्हारी रक्षा कर लूँगा।'

बिलाव भी बुद्धिमान था। उसने कहा– 'सौम्य! तुम्हारी बातों से बड़ी प्रसन्नता हुई है। इस समय मेरे प्राण संकट में हैं। मैं तुम्हारी शरण में हूँ। तुम जैसा भी कहोगे, मैं वैसा ही करूँगा।'

चूहा बोला–'तो मैं तुम्हारी गोद में नीचे छिप जाना चाहता हूँ, क्योंकि नेवले से मुझे बड़ा भय हो रहा है। तुम मेरी रक्षा करना। इसके बाद मैं तुम्हारा जाल काट दूँगा। यह बात मैं सत्य की शपथ लेकर कहता हूँ।'

लोमश बोला– 'तुम तुरन्त आ जाओ। भगवान तुम्हारा मंगल करें। तुम तो मेरे प्राणों के समान प्रिय सखा हो। इस संकट से छूट जाने पर मैं अपने बन्धु–बान्धवों के साथ तुम्हारा प्रिय तथा हितकारी कार्य करता रहूँगा।'

अब चूहा आनन्द से उसकी गोद में जा बैठा। बिलाव ने भी उसे ऐसा निश्चिन्त बना दिया कि वह माता–पिता की गोद के समान उसकी छाती से लगकर सो गया। जब नेवले और उल्लू ने उनकी ऐसी गहरी मित्रता देखी तो वे निराश होकर अपने–अपने स्थान को चले गए। चूहा देश काल की गति को पहचानता था, इसलिए चाण्डाल की प्रतीक्षा करते हुए धीरे–धीरे जाल काटने लगा। बिलाव बन्धन के कारण ऊब गया था। उसने उससे जल्दी–जल्दी जाल काटने की प्रार्थना की।

पलित ने कहा, 'भैया! घबराओ मत। मैं कभी नहीं चूकूँगा। असमय में काम करने से कर्ता को हानि ही होती है। यदि मैंने पहले ही तुम्हें छुड़ा दिया तो मुझे तुमसे भय हो सकता है। इसलिए जिस समय मैं देखूँगा कि चाण्डाल हथियार लिए हुए इधर आ रहा है, उसी समय मैं तुम्हारे बन्धन काट डालूँगा। उस समय तुम्हें वृक्ष पर चढ़ना ही सूझेगा और मैं तुरन्त अपने बिल में घुस जाऊँगा।'

बिलाव ने कहा–'भाई! पहले के मेरे अपराधों को भूल जाओ। अब तुम फुर्ती के साथ मेरा बन्धन काट दो। देखो, मैंने तुम्हें आपत्ति में देखकर तुरन्त बचा लिया। अब तुम अपना मनोमालिन्य दूर कर दो।'

चूहे ने कहा– 'मित्र! जिस मित्र से भय की सम्भावना हो, उसका काम इस प्रकार करना चाहिए, जैसे बाजीगर सर्प के साथ उसके मुँह से हाथ बचाकर खेलता है। जो व्यक्ति बलवान के साथ सन्धि करके अपनी रक्षा का ध्यान नहीं रखता, उसका वह मेल अपथ्य भोजन के समान कैसे हितकर होगा? मैंने बहुत–से तन्तुओं को काट डाला है, अब मुख्यतः एक ही डोरी काटनी

Pdalkoo.com

है। जब चाण्डाल आएगा, तब भय के कारण तुम्हें भागने की ही सूझेगी, उसी समय मैं तुरन्त डोरी को काट डालूँगा। तुम बिलकुल न घबराओ।'

इसी तरह बातें करते वह रात बीत गई। लोमश का भय बराबर बढ़ता गया। प्रातःकाल परिधि नामक चाण्डाल हाथ में शस्त्र लिए आता दिखा। वह साक्षात् यमदूत के समान जान पड़ता था। ऐसे में बिलाव भय से व्याकुल हो गया। अब चूहे ने तुरन्त जाल काट दिया। बिलाव झट पेड़ पर चढ़ गया और चूहा भी बिल में घुस गया। चाण्डाल भी जाल को कटा देख निराश होकर वापस चला गया।

अब लोमश ने चूहे से कहा– 'भैया! तुम मुझसे कोई बात किए बिना ही बिल में क्यों घुस गए? अब तो मैं तुम्हारा मित्र हो गया हूँ और अपने जीवन की शपथ करके कहता हूँ, अब मेरे बन्धु–बान्धव भी तुम्हारी इस प्रकार सेवा करेंगे, जैसे शिष्य लोग गुरु की सेवा करते हैं। तुम मेरे शरीर, मेरे घर और मेरी सारी सम्पत्ति के स्वामी हो। आज से तुम मेरा मन्त्रित्व स्वीकार करो और पिता की तरह मुझे शिक्षा दो। बुद्धि में तो तुम साक्षात् शुक्राचार्य ही हो। अपने मन्त्र बल से जीवनदान देकर तुमने मुझे निःशुल्क खरीद लिया है। अब मैं सर्वथा तुम्हारे अधीन हूँ।'

बिलाव की चिकनी–चुपड़ी बातें सुनकर परम नीतिज्ञ चूहा बोला–'भाई साहब! मित्रता तभी तक निभती है, जब तक स्वार्थ से विरोध नहीं आता। मित्र वही बन सकता है, जो कुछ काम आ सके तथा जिस के मरने से कुछ हानि हो, तभी तक मित्रता चलती है। न मित्रता कोई स्थायी वस्तु है और न शत्रुता ही। स्वार्थ की अनुकूलता–प्रतिकूलता से ही मित्र तथा शत्रु बनते रहते हैं। समय के फेर से कभी मित्र ही शत्रु तथा कभी शत्रु ही मित्र बन जाता है। हमारी प्रीति भी एक विशेष कारण से हुई थी। अब जब वह कारण नष्ट हो गया तो प्रीति भी नहीं रही। मुझे खा जाने के सिवाय अब मुझसे तुम्हारा कोई दूसरा प्रयोजन सिद्ध होने वाला नहीं। मैं दुर्बल तुम बलवान, मैं भक्ष्य तथा तुम भक्षक ठहरे। अतएव तुम मुझसे भूख बुझाना चाहते हो। भला, जब तुम्हारे प्रिय पुत्र और स्त्री मुझे तुम्हारे पास बैठा देखेंगे तो मुझे चट करने में वे क्यों चूकेंगे? इसलिए मैं तुम्हारे साथ नहीं रह सकता। यदि मेरे किए हुए उपकार का तुम्हें ध्यान रहे तो यदि कभी मैं चूक से तुम्हारे सम्मुख आ जाऊँ तो मुझे चट न कर जाना।'

पलित ने जब इस प्रकार खरी–खरी सुनाई तो बिलाव ने लज्जित होकर कहा– 'भाई! मैं सत्य की शपथ खाकर कहता हूँ, तुम मेरे परमप्रिय हो और मैं तुमसे द्रोह नहीं कर सकता। तुम्हारे कहने से मैं अपने बन्धु–बान्धवों के साथ प्राण तक त्याग सकता हूँ।'

इस प्रकार बिलाव ने जब चूहे की और भी प्रशंसा की, तब चूहे ने कहा– 'आप वास्तव में बड़े साधु हैं। आप पर मैं पूर्ण प्रसन्न हूँ, तथापि मैं आप में विश्वास नहीं कर सकता। इसलिए लोमश जी! मुझे आपसे सर्वथा सावधान रहना चाहिए और आपको भी जन्म शत्रु चाण्डाल से बचना चाहिए।'

चाण्डाल का नाम सुनकर बिलाव भाग गया और चूहा भी बिल में चला गया। दुर्बल और अकेला होने पर भी अपने बुद्धिबल से पलित कई शत्रुओं से बच गया।

अभ्यास

1. पलित नाम का चूहा सौ दरवाज़े वाले बिल में क्यों रहता था?
2. लोमश बिलाव के जाल में फँसने पर पलित निर्भय क्यों हो गया?
3. किन स्थितियों में चूहा बिलाव की शरण में चला गया?
4. चूहे और बिलाव के बीच क्या समझौता हुआ?
5. चूहे ने बिलाव के बन्धन काटने में जान–बूझकर देरी क्यों की?
6. अपने से बलवान के साथ सन्धि करने के बाद भी उससे सावधान रहना चाहिए। क्यों?
7. क्या चूहे ने बिलाव की चिकनी–चुपड़ी बातों पर विश्वास न करके, समझदारी का परिचय दिया? हाँ या नहीं के पक्ष में विचार करो।
8. बिलाव से पीछा छुड़ाने के लिए चूहे ने अन्त में क्या कहा?
9. अपने स्वाभाविक शत्रु से संकट में किया गया समझौता मित्रता का आधार बन सकता है या नहीं? अपने अनुभव के आधार पर बताओ।
10. 'मित्रता या शत्रुता स्थायी नहीं होती।' इस विचार से आप कहाँ तक सहमत हैं? सोदाहरण बताओ।
11. अपनी देखी या सुनी हुई किसी ऐसी घटना या प्रसंग का उल्लेख करो, जब किसी व्यक्ति को अतिविश्वास के कारण हानि उठानी पड़ी हो।
12. असमय में काम करने से कर्ता को हानि ही होती है। विषय पर चर्चा करो।

Pdfkoo.com

17 नियम–अनुशासन : सभ्य जीवन का आधार

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।

अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति।। (गीता 3/16)

अर्थ : हे पार्थ! जो मनुष्य इस लोक में इस प्रकार परम्परा से प्रचलित सृष्टि–चक्र के अनुसार नहीं चलता, वह इन्द्रियों के द्वारा भोगों में रमण करने वाला अघायु (पापमय जीवन बिताने वाला) मनुष्य संसार में व्यर्थ ही जीता है।

भावानुवाद : चक्र सृष्टि का नियमों में चल रहा, जो अनुसार इसके नहीं वर्तता।

रमण करता है इन्द्रियों में ही जो, जीता व्यर्थ में ही पापी है वो।।

श्रीमद्भगवद्गीता का यह श्लोक नियम–संयम और अनुशासनपूर्वक जीवन जीने की प्रेरणा है। नियम अनुशासन तोड़कर जीने की हानियाँ यहाँ व्यक्त की गई हैं।

भगवद्गीता एक ऐसा अनूठा ग्रन्थ है, जिसके प्रत्येक श्लोक में प्रेरणा लेने के लिए बहुत कुछ है। इस श्लोक का पहले संक्षिप्त भाव समझें–सृष्टि का चक्र नियमों में चल रहा है, जो नियमों के अनुसार नहीं चलता, वह केवल इन्द्रिय सुखों में ही रमण करने वाला, वहीं तक सीमित रहता हुआ, जीवन व्यर्थ कर लेता है। मात्र इतना पढ़कर बच्चो! आपको लग सकता है कि अभी तो हमारी छोटी आयु है व पढ़ाई के दिन हैं। अभी से हमें इस चक्र को समझने की क्या आवश्यकता?

बहुत बड़ी आवश्यकता है। बाल्यकाल से ही आवश्यक है कि जीवन नियम–अनुशासन में हो। प्रकृति परमात्मा ने जिस यज्ञ भाव से सृष्टि बनाई और यह चल रही है, उसी यज्ञ भाव से मनुष्य इसे मानकर इसका प्रयोग करता तो कठिनाई नहीं होती। शरीर का संचालन परमात्मा की शक्ति से है, शरीर को नियम संयम में रखो तो ही अच्छा, नहीं तो कठिनाइयाँ होंगी ही। ऐसा देखा भी जा रहा है।

शरीर या प्रकृति की व्यवस्था–विकृतियाँ परमात्मा ने बनाई, नियम संयम में न चलने से ही समस्याएँ हैं। यह श्लोक यही समझाना चाहता है कि कहीं भी हों, नियम और अनुशासन में रहें। घर परिवार की व्यवस्था तभी अच्छे ढंग से चल सकती है, जब परिवार में नियम अनुशासन हो। कोई भी कार्यालय तभी ठीक से चल सकता है, जब वहाँ काम करने वाले नियमों का पालन करें।

इस श्लोक को प्रत्येक क्षेत्र में देखो! प्रकृति में सूर्य निरन्तर समय पर उगता व छिपता है। इसी प्रकार तुम स्वास्थ्य के नियमों का पालन करोगे, शरीर को नियम संयम में रखोगे तो ही शरीर की व्यवस्था ठीक चलेगी। सड़क पर बाईं ओर चलो–यह नियम है; अथवा इससे सम्बन्धित और भी ट्रैफिक नियम जैसे गति नियन्त्रण, लाल बत्ती है तो रुकना, दोपहिया वाहन चला रहे हैं तो हैलमेट लगाना या कार चलाते हुए बैल्ट लगाना, चौराहे पर देखकर आगे बढ़ना आदि–आदि! कोई कहे, मुझे क्या? मैं जैसे चलूँ, जहाँ चलूँ–आप समझ सकते हैं कि ऐसी भूल कितने घातक

परिणाम ला सकती है अथवा सीधे शब्दों में दुर्घटनाओं को स्वयं का निमन्त्रण और जीवन को निरर्थक गँवाने की स्थिति बना सकती है। कोई कहे मुझे जानकारी ही नहीं, यह भी अनुचित है। नियम–कानून से अनभिज्ञता कोई बहाना नहीं (Ignorance of Law is no excuse)

घर में हैं या विद्यालय में अथवा किसी कार्यालय में; वहाँ के नियमों के अनुसार रहेंगे तो ही व्यवस्था ठीक चलेगी। हर व्यक्ति यदि अपने मनमाने ढंग से व्यवहार आचरण करने लगे तो सोचो परिणाम क्या होगा? आपसी विद्वेष व क्लेश बढ़ेंगे; व्यवस्था में कठिनाइयाँ आएँगी ही।

भारत की युवा ऊर्जा! आओ, श्रीमद्भगवद्गीता की इस प्रेरणा को व्यापक अर्थ में समझें और स्वीकार करें! हर क्षेत्र में नियम पालन को अपना स्वभाव बनाएँ। विद्यालय में हैं या कार्यालय में; वाहन चला रहे हैं या कुछ और कर रहे हैं– नियमों का पालन अपने आप में आपको महानता की ओर ले जाता है; जबकि नियमों का उल्लंघन अपने आगे ही प्रश्न चिह्न खड़े करता है। नियम–अनुशासन अच्छे, सभ्य, मर्यादित जीवन का प्रथम सोपान है। बच्चो। क्या आप असभ्य कहलाना चाहोगे? यदि नहीं तो आओ श्रीमद्भगवद्गीता की इस प्रेरणा के अनुसार ही जीवन यात्रा में आगे बढ़ें और महानता के शिखर छूने में तत्पर हो जाएँ। अपने जीवन में गीता को जीएँ। इसीलिए तो यह आह्वान है कि गीता पढ़ो, हर क्षेत्र में आगे बढ़ो।

अभ्यास

1. उक्त श्लोक का भावार्थ क्या है?
2. सृष्टि के नियम चक्र को समझने की क्या आवश्यकता है?
3. समस्याएँ क्यों हैं तथा इनका समाधान क्या है?
4. नियम संयम हर क्षेत्र में क्यों आवश्यक है?
5. हमें इस गीता श्लोक से क्या प्रेरणा एवं संकल्प लेना है?
6. शरीर को नियम व संयम में रखने के क्या लाभ हैं?
7. घर परिवार व विद्यालय को सुचारु रूप से चलाने के क्या–क्या उपाय होते हैं?
8. युवाओं को अपनी शक्ति (ऊर्जा) किस दिशा में लगानी चाहिए?
9. असभ्य शब्द किसका द्योतक है?
10. जीवन की ऊँचाइयाँ छूने के क्या–क्या सोपान होते हैं?
11. सृष्टि का चक्र नियमों में चल रहा है–उदाहरण सहित स्पष्ट करो।
12. नियम कानून की जानकारी अत्यावश्यक है, इस विषय में अध्यापक कक्षा में चर्चा कराएँ।
13. नियम–अनुशासन सभ्य, मर्यादित जीवन का प्रथम सोपान है, इस विषय में एक आलेख तैयार करो।

pdakoo.com